www.epradeep.com अंक : 04 वर्ष : 01 अक्तूबर-दिसम्बर 2021

ई- प्रदीप
ऑनलाइन पत्रिका

Peer Reviewed & Refereed Journal

साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक
ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

ई - प्रदीप

सम्पादक
डॉ. राहुल उठवाल

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

सुहृदय विद्वतजन,

"ई-प्रदीप" त्रैमासिक ऑनलाइन पत्रिका के **आगामी** अंक **जनवरी-मार्च 2022** हेतु आपके शोध-आलेख, कहानियां, कविताएँ, पुस्तक समीक्षाएं एवं अन्य विधाओं की रचनाएँ आमंत्रित हैं। कृपा कर अपनी रचनाएँ हिन्दी यूनिकोड फॉण्ट में ही भेजें किसी अन्य फॉण्ट में रचनाएँ स्वीकार नही की जायेगी। अपनी रचना के साथ अपना एक नवीनतम फोटो एवं जीवन परिचय निम्नलिखित मेल आई डी पर अवश्य भेजें-

eppatrika@gmail.com

शोध-आलेख भेजने वाले लेखकों के लिए निर्देश :

- **शोध आलेख निम्न प्रारूप में ही भेजें।**
- शोध आलेख विषय
- नाम, विभाग का नाम, संस्थान का नाम अथवा पता, ई-मेल एवं मोबाइल नंबर
- शोध सारांश जो 200 शब्दों से अधिक न हो
- बीज शब्द, भूमिका, निष्कर्ष
- संदर्भ में लेखक का नाम, प्रकाशन वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशन का नाम, प्रकाशन का स्थान अवश्य लिखें। ध्यान रखें कि रचनाएँ पूर्णत: मौलिक हों। पूर्व प्रकाशित रचना यदि अज्ञानतावश प्रकाशित हो जाती है तो उसका पूर्ण उत्तरदायित्व साहित्यकार एवं रचनाकार का होगा।
- शोध-पत्र 3000 - 3500 शब्दों से अधिक न हो तथा 200 शब्दों का सारांश भी प्रेषित करें। शोध आलेख ए-4 साइज़ के कागज पर कंप्यूटर से एक ओर यूनिकोड अथवा मंगल फॉण्ट साइज़ 14 में टंकण किया हुआ ही भेजें। भेजते समय शोध पत्र एम एस वर्ड फाइल में सीधे दी गयी ई-मेल आई डी पर डाउनलोड करें, मेल बॉक्स में कॉपी पेस्ट न करें। किसी अन्य फॉण्ट, स्केन, पीडीएफ अथवा मेल बॉक्स में कॉपी पेस्ट कर भेजी गयी रचना किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं की जायेगी। उसके लिए अलग से कोई प्रतिउत्तर भी नहीं दिया जायेगा।
- यदि शोध-आलेख एवं भेजी गयी रचना कापीराईट का उल्लंघन करती है अथवा किसी अन्य रचना या पूर्व प्रकाशित रचना का कोई अंश बिना प्रकाशक एवं लेखक की पूर्वानुमति के प्रकाशित हो जाता है तो उसका पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक एवं रचनाकार का होगा। संपादक परोक्ष या अपरोक्ष रूप से इसके लियें उत्तरदायी नही होगा।
- कृपया शोध-आलेख भेजने के पूर्व यह सुनिश्चित कर लें कि उसमे व्याकरण एवं मात्राओं की गलतियाँ किसी भी स्थिति न हों।
- शोध पत्र के प्रकाशन हेतु ई-प्रदीप पत्रिका की वेबसाइ www.epraddep.com पर दिये गये "मौलिकता का प्रमाण-पत्र" (Certification of Originality) डाउनलोड करें एवं उसे पूर्ण भरकर अवश्य भेजें, इसमें शोध-आलेख अन्यत्र न भेजे जाने की पुष्टि की गयी हो। शोध-पत्र की सामग्री कहीं से चोरी की गयी (plagiarism) नहीं होनी चाहिए। शोध पत्र में सारणी एवं चित्रों का प्रयोग लेख के बीच में न करते हुए अंत में सन्दर्भ या संलग्नक के रूप में करें।
- कृपाया लेटेस्ट अपडेट के लिए निम्न लिंक https://chat.whatsapp.com/Gp9fGiJZgvCBqLxyou57xY द्वारा व्हाट्सएप्प समूह एवं टेलीग्राम एप https://t.me/joinchat/HDaPVF1w0YwPGJlo द्वारा जुड़ जाएँ।

www.epradeep.com **ई - प्रदीप** अंक : 04 वर्ष : 01 अक्तूबर-दिसम्बर 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

प्रधान सम्पादक- डॉ. राहुल उठवाल

सम्पर्क
ई - प्रदीप पत्रिका ऑनलाइन (त्रैमासिक)
आई - 605, वी.वी.आई.पी . एड्रेसेज़, राजनगर एक्सटेंशन गाजियाबाद, उ. प्र. 201017
दूरध्वनि: 7066508089, **ई-मेल**: eppatrika@gmail.com, info@epradeep.com

पत्रिका शुल्क - ई - प्रदीप पूर्ण रूप से निशुल्क है।

यदि आप ई - प्रदीप के प्रकाशन हेतु स्वेछा से आर्थिक सहयोग करना चाहते हैं तो निम्नलिखित बैंक अकाउंट में सहयोग राशि दे सकते हैं- खाता संख्या 43601010022913 5, आई.एफ.एस.सी UTIB0000436, नाम: Rahul Uthwal/ यू.पी.आई 7066508089@axisbank अथवा फोनपे / गूगलपे / पेटीएम 7066508089

- ई -प्रदीप से संबंधित किसी भी जानकारी के लिए कृपया ई -प्रदीप के ई-मेल पर मेल करें अथवा दूरभाष पर कार्यालय समय दोपहर 12:00 से संध्या 4:00 बजे तक सम्पर्क करें।
- ई-प्रदीप में प्रकाशित की गयी सभी विधाओं की रचनाएँ लेखकों एवं रचनाकारों की मौलिक रचनाएँ हैं। प्रकाशक और सम्पादक किसी भी रूप में इनके लिएं उत्तरदायी (जिम्मेदार) नहीं होगा।
- प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक, अनुवादक एवं डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी की अनुमति आवश्यक है।
- ई-प्रदीप पत्रिका से संबंधित समस्त विवाद चदौसी, जनपद सम्भल न्यायालय के अधीन होगा।

पत्रिका मे व्यक्त विचार लेखकों के अपने विचार हैं। इनसे सम्पादन मंडल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

Peer Reviewed & Refereed Journal

www.epradeep.com ई - प्रदीप अंक : 04 वर्ष : 01 अक्तूबर-दिसम्बर 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

सम्पादकीय समिति

संरक्षक
डॉ. डी. एन. शर्मा
पूर्व प्राचार्य एवं अध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
एम. जी.एम. महाविद्यालय, सम्भल, उ. प्र.

सम्पादक
डॉ. राहुल उठवाल

संयुक्त सम्पादक
डॉ. प्रवीन चंद बिष्ट
सहा. प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी)
रामनारायण रुइया स्वायत्त
महाविद्यालय, मुम्बई

सह- सम्पादक
डॉ. ईश्वर पवार
एसो प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष
सी टी बोरा महाविद्यालय, शिरूर
महाराष्ट्र

सह- सम्पादक
डॉ. नीलम ऋषिकल्प
एसो. प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
राम लाल आनन्द महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सह- सम्पादक
डॉ. सीमा शर्मा
एसो. प्रोफ़ेसर (हिन्दी)
जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

www.epradeep.com ई - प्रदीप अंक : 04 वर्ष : 01 अक्तूबर-दिसम्बर 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

पीर रिव्यू समिति

1. **प्रो. नवीन चन्द्र लोहानी**
विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
चौ.चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

2. **डॉ. सतीश पाण्डे**
पूर्व विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
के.जे. सौमया स्वायत्त महाविद्यालय, विद्याविहार, मुम्बई
सम्पादक—समीचीन (यू जी सी केयर लिस्टिड जर्नल)

3. **डॉ. महेश 'दिवाकर' (डी. लिट्)**
साहित्य भूषण से सम्मानित
पूर्व विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
जी. एस. हिन्दू महाविद्यालय चांदपुर-स्याऊ, बिजनौर

4. **डॉ. मुकेश चन्द्र गुप्ता**
एसो. प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
एम. एच. महाविद्यालय, मुरादाबाद

5. **प्रो. विजय कुमार रोड़े**
विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
सावित्रीबाई फूले विश्वविद्यालय, पुणे

6. **डॉ. अनीता कपूर**
लेखक / कवि / पत्रकार
हेवर्ड, कैलिफोर्निया, यू एस ए

7. **डॉ. गंगा प्रसाद शर्मा 'गुणशेखर'**
साहित्य शिरोमणि
पूर्व प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
ग्वांगडोंग यूनिवर्सिटी ऑफ फॉरेन स्टडीज, चीन, ग्वांगडोंग, गुआंगझोउ, बाईयुन, चीन

8. **श्री. बी. एल. आच्छा**
पूर्व प्राध्यापक एवं शिक्षाविद्
उच्च शिक्षा विभाग,
मध्य प्रदेश शासन

9. **डॉ. वेदप्रकाश सिंह**
सहा. प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

10. **डॉ. रीना सिंह**
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर
आर. के. तलरेजा महाविद्यालय,
उल्हासनगर, जिला थाने, महाराष्ट्र

* सभी पद अवैतनिक हैं।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

Peer Reviewed & Refereed Journal

www.epradeep.com ई - प्रदीप अंक : 04 वर्ष : 01 अक्तूबर-दिसम्बर 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

इस अंक में .....

कविताएँ

- भारत माँ की जय, राजनीतिक बदलाव, अपडेशन.....10-13
  डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट
- सूखा पत्ता हूँ उपवन का 14
  डॉ. कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव
- शब्द जब शत्रु बन जाए.....15-16
  समीर उपाध्याय
- सब बदल गया है.....17
  जितेन्द्र 'कबीर'
- लौटकर आयेगा.....18
  अलका 'सोनी'
- दुनिया में...,जाग जा मनुष्य, सीख.....19-20
  गायत्री शर्मा
- तुम्हारा होना.....21
  सलिल सरोज
- जरूरतें भी ना ले पाए.....22
  प्रियंका कृष्णकांत दूबे
- नारी को नारी नहीं समझती.....23
  शिवांगी सक्सेना

♦ बेटियां.....24
खुशी वार्ष्णेय
♦ गुरुकुल.....25
ज्योति
♦ न जाने क्यूँ! चाँद मुस्कराने लगा, क्या! दुश्वारियों में जीता रहेगा किसान..., मैं कवि बनना चाहता हूँ.....26-29
लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
♦ निषेध, अधूरी कविता.....30-31
डॉ सुखबीर सिंह शास्त्री
♦ कठपुतली.....32
पैजू के
♦ आईना, नदियाँ 33-34
मुकेश कुमार ऋषि वर्मा
♦ बरसे यादों में प्रीति तुम्हारी.....35
बृजेश आनन्द राय

गज़ल

♦ दूर मुझसे न जा वरना.....36
निज़ाम-फतेहपुरी

लघु कथाएं

♦ घुन, घर 37-38
दलजीत कौर

www.epradeep.com ई - प्रदीप अंक : 04 वर्ष : 01 अक्तूबर-दिसम्बर 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

कहानियाँ

- मुझे धर्म देखा गया इंसान नहीं.....39-41
  पायल कुमारी
- जीबी रोड की एक शाम.....42-45
  आदर्श कुमार
- विस्थापित सुदामा का जवाब, प्रेम की जात.....46-65
  श्यामल बिहारी महतो

अनुवाद

- सुश्री फ़ोर्ब्स की सुखद गर्मियाँ...(लातिन अमेरिकी कहानी का अप्रकाशित हिंदी अनुवाद).....66-79
  अनुवादक : सुशांत सुप्रिय

संस्मरण

- स्मृतियां.....80-81
  महेन्द्र "अटकलपच्चू"
- राष्ट्रीय जनजातीय नृत्य महोत्सव.....82-87
  सतीश उपाध्याय

शोध-आलेख

- शिक्षा में बहुभाषिकता- चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ.........................88-95
  दिनेश कुमार गुप्ता
- समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में अभिव्यक्त उपभोक्तावादी संस्कृति.96-104
  डॉ. अनीता यादव
- भारत का अमृत महोत्सव और नई प्रौद्योगिकी व हिंदी................105-108
  डॉ. अमित कुमार दीक्षित

सम्पादकीय

नवीन वर्ष में प्रवेश करते ही कोविड-19 के एक नये प्रकार (वेरिएंट) ओमिक्रोन की दहशत ने एक बार फिर हमारे हृदयों में भय का संचार कर दिया है। पूरे विश्व में एक बार फिर मौत ने अपना तांडव मचाना प्रारम्भ कर दिया है । परन्तु ऐसे कठिन समय में भी कोरोना के योद्धाओं के साथ-साथ कवियों एवं रचनाकारों ने अपना सहस नहीं खोया है। ई-प्रदीप का यह अक्तूबर-दिसम्बर का अंक इस बात का प्रमाण है कि हम न तो हताश हैं, न निराश और न ही भयभीत।

कलम के सिपाही अपने कार्य में लगातार बिना किसी भय के कार्यरत हैं, और यह अंक इसी बात की परिणिति है । इस अंक में मुख्यतः साहित्य की विभिन्न विधाओं जैसे कविता, ग़ज़ल, कहानी, लघु कथा, संस्मरण, अनुवाद एवं शोध-आलेखों को सम्मलित किया गया है।

कविता कॉलम के अंतर्गत भारत माँ की जय, राजनीतिक बदलाव, सूखा पत्ता हूँ उपवन का, शब्द जब शत्रु बन जाए, सब बदल गया है, लौटकर आयेगा, दुनिया में...,जाग जा मनुष्य, सीख, तुम्हारा होना, जरूरतें भी न ले पाए, नारी को नारी नहीं समझती, गुरुकुल, न जाने क्यूँ ! चाँद मुस्कराने लगा, क्या ! दुश्वारियों में जीता रहेगा किसान...,मैं कवि बनना चाहता हूँ, जिन्दगी और मौत, निषेध, अधूरी कविता, कठपुतली, आईना, नदियाँ आदि कविताओं को सम्मलित किया गया है । इसके साथ ग़ज़ल कॉलम में दूर मुझसे न जा वरना, लघु कथा में घुन, घर, कहानी में मुझे धर्म देखा गया, इंसान नहीं, जीबी रोड की एक शाम, विस्थापित सुदामा का जवाब, प्रेम की जात, संस्मरण में स्मृतियाँ, राष्ट्रीय जनजातीय नृत्य महोत्सव एवं शोध आलेख कॉलम के अंतर्गत शिक्षा में बहुभाषिकता -चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ, समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में अभिव्यक्त उपभोक्तावादी

संस्कृति, भारत का अमृत महोत्सव और नई प्रौद्योगिकी व हिंदी को सम्मलित किया गया है। भारत का अमृत महोत्सव और नई प्रौद्योगिकी व हिंदी का महत्त्व स्थापित करते हुए लेखक नई प्रौद्योगिकी में भारतीय एप्लीकेशन Koo (कू) की प्रशंसा करते हुए लिखते हैं कि भारत का माइक्रोब्लॉगिंग और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म Koo (कू) भारतीय भाषाओं में बातचीत का प्रमुख मंच बन गया है। Koo (कू) के 1 करोड़ यूजर में से करीब 50 % (50 लाख) यूजर हिंदी में बातचीत करते हैं। Koo पर हिदीं पोस्ट की संख्या औसतन किसी भी माइक्रोब्लॉगिंग साइट पर हिंदी पोस्ट की संख्या से लगभग दोगुनी है। इसके अलावा पिछले चार महीनों में Koo पर हिंदी उपयोगकर्ता की संख्या में 80 % वृद्धि हुई है। अनुमान है कि अगले 5-6 वर्षों में भारतीय इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या अरबों तक पहुँच सकती है।

हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास भी है कि 'ई-प्रदीप' ऑनलाइन पत्रिका का पाठक इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री से अवश्य ही लाभान्वित होगा । आपके सुझाव एवं प्रतिक्रिया हमारे प्रयास को और अधिक सबल बनते हुए पत्रिका को उत्तरोत्तर गतिशील करने में सार्थक होगें । हम आपके सुझावों एवं प्रतिक्रियाओं का हृदय से स्वागत करते हैं। आपके सुझाव एवं प्रतिक्रियाओं द्वारा हम समय-समय पर पत्रिका में सुधार करने के भरसक प्रयास करेंगे।

डॉ. राहुल उठवाल
सम्पादक

www.epradeep.com ई - प्रदीप अंक : 04 वर्ष : 01 अक्तूबर-दिसम्बर 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

भारत माँ की जय

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

जय-जय भारत माँ की जय हो
जय-जय भारत माँ की जय हो
लोकतंत्र जिसका अखंड है
जिसमें धर्म सभी शामिल हैं
जिसका मान बचा रखने को
धर्म सभी नत यहाँ दिखते हैं
जय-जय भारत माँ की जय हो
जय-जय भारत माँ की जय हो

हिम शिखर तना जिसके उत्तर में
दुश्मन के सम छाती ताने
दक्षिण में डटा हुआ सागर है
आँधी तूफा सबको पाटे
पूर्व हमारा वनस्पति संग
मन को हर, हर्षित कर डाले
पश्चिम की भी छटा निराली
विषम काल को भी सम कर दे
जय-जय भारत माँ की जय हो
जय-जय भारत माँ की जय हो

कल-कल कर नदियाँ बहती हैं
शीतल पवन यहाँ चलती हैं
ऋतुओं का भी देश यही है
महि भी तो रंगीन यहीं है
इसमें ही जीवन का अमृत
अन्न रूप में वो फलता है
जय-जय भारत माँ की जय हो
जय-जय भारत माँ की जय हो

वीरों की यह जन्मभूमि है
मानव पर जब विपदा आई
वीर पुरुष ही नहीं यहाँ के
वीरांगनाएँ भी सामने आई
खड्ग उठाकर रणभेरी संग
न्याय दिलाने कदम बढ़ाने
जय-जय भारत माँ की जय हो
जय-जय भारत माँ की जय हो

शांति दूत बनकर भारत अब
विश्व शांति हित तत्पर है
शांति-शांति सब ओर शांति का
बजा रहा नगाड़ा है
जय-जय भारत माँ की जय हो
जय-जय भारत माँ की जय हो

राजनीतिक बदलाव

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

राजनीति के मुद्दे अब तो
बदले-बदले दिखते हैं
मंदिर-मस्जिद मुद्दे बनकर
राजनीति में दिखते हैं
जाति-धर्म को तूल दिए ये
भेदभाव फैलाते हैं
हिन्दू-मुस्लिम मुख्य विषय बन
कड़वाहट ले आते हैं
समय-समय पर जनता को ये
इसी तरह भरमाते हैं।
विकास की बातें जब आती है
तुलना पाकिस्तान से होती
भारत की दुर्दशा देख यह
खट्टा तन-मन हो जाता है
देशभक्ति का भाव देश में
फिर कब नेता मेंआएगा
शिक्षा को समृद्ध करके कब
रोजगार की बातें होंगी
मूलभूत सुविधाएँ देकर
जनता को कब खुशी मिलेगी
जनता को कब खुशी मिलेगी।

अपडेशन

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

अभी-अभी हम उबरे ही थे
लम्बा समय बिता घर पर ही
बाहर आने को तत्पर थे
सरकारों ने अनुमति दे दी
दफ्तर सारे अनुबंधों संग
फिर से पटरी पर लौटे थे
तभी अचानक ओमिक्रॉन ने
अपने आने की आहट से
फिर से हाहाकार मचाया।
फिर से हाहाकार मचाया।

बच्चों की खुशियों को फिर से
आकर ग्रहण लगाया इसने
बच्चों से बच्चों का बचपन
फिर से दूर भगाया इसने
कोरोना के इस वेरिएंट ने
फिर से हाहाकार मचाया।

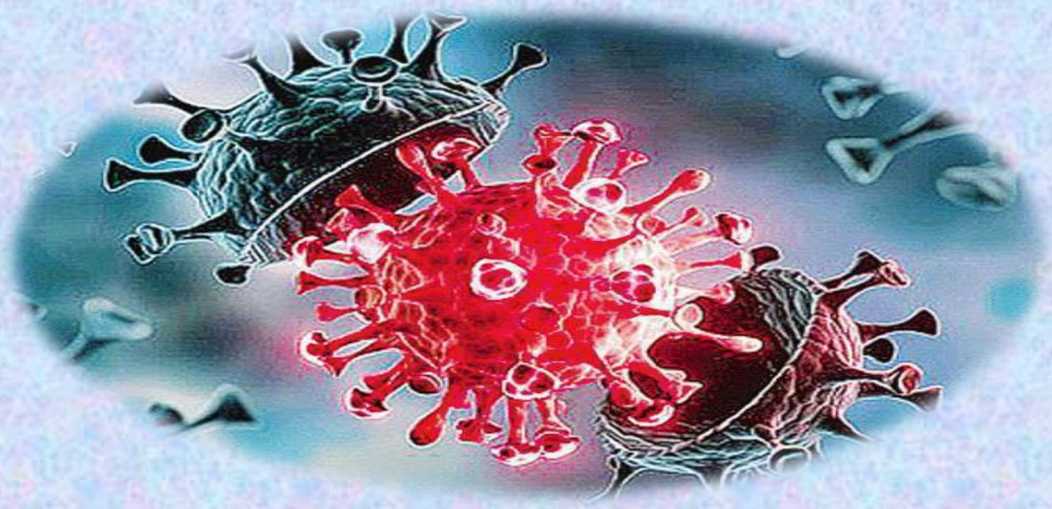

लगता है अब एक बार फिर
दफ्तर में फिर धूल जमेगी
स्कूलों में लटके ताले
कोरोना की कथा कहेगी
कोरोना की कथा कहेगी
कोरोना के अपडेशन ने
सॉफ्टवेयर वेयर के अपडेशन से
गति को तेज बना रखा है
पूरी दुनिया में फिर से अब
हाहाकार मचा रखा है
हाहाकार मचा रखा है ।

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

रामनारायण रुइया स्वायत्त महाविद्यालय, माटुंगा, मुंबई के हिन्दी विभागाध्यक्ष हैं। उन्हें मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई ने शोध-निर्देशक के रूप में नियुक्त किया हैं। वे प्रसिद्ध अर्धवार्षिक साहित्यिक जर्नल 'समीचीन', मुंबई (यू. जी. सी. केयर लिस्ट में सम्मिलित) के संयुक्त-संपादक हैं। उनकी पुस्तक शैलेश मटियानी के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन, नमन प्रकाशन, दिल्ली (2013) प्रकाशित हो चुकी है। उनके द्वारा कई पुस्तकें सम्पादित की जा चुकी है जिनमें रचनाधर्मी देवेश ठाकुर, नमन प्रकाशन, दिल्ली (2019) व आधुनिक हिन्दी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, नमन प्रकाशन, दिल्ली (2019) प्रमुख हैं। उनके विविध पुस्तकों व पत्र-पत्रिकाओं में लगभग चालीस से अधिक शोध-आलेख प्रकाशित हो चुके हैं।

सम्पर्क- दूरध्वनी: +91-8850569910, अणुमेल: prvinchandra@gmail.com

सूखा पत्ता हूँ उपवन

डॉ. कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव

डॉ. कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव

शिक्षा-एमएससी,बीएड, पीएचडी

लेखन विधा- कैरियर आलेख, बाल साहित्य

सम्प्रति- शासकीय शिक्षक

अन्य- स्तरीय पत्र पत्रिकाओं में नियमित प्रकाशन

राव गंज कालपी, जालौन

उत्तर प्रदेश, पिन-285204

मोबाइल- 945131813

ईमेल:

om_saksham@rediffmail.com

इंतजार मैं करता रहता ,
सुबह, दोपहर और शाम ।
अब नही कोई चिट्ठी आती
और ना आता पैगाम ।।
कोई याद ना करता मुझको ,
और ना कोई फ़ोन करे ।
सूखा पत्ता हूँ उपवन का ,
और पत्ते है हरे भरे ।।
नन्हे नन्हे प्यारे बच्चे ,
है उपवन के फूल ।
मैं भी उपवन का सदस्य हूँ ,
लोग गए सब भूल ।।
तीव्र हवा का झोंका मुझको ,
जाने कब ले जाएगा ।
मेरी भी सुध ले लो कोई ,
समय लौट ना पायेगा ।
मेरा जीवन साथी पत्ता ,
उड़कर जाने कहाँ गया ।
मैं ढूंढ ना पाया उसको ,
मेरा उपवन छोड़ गया ।।
सभी रंगे हैं अपने रंग में ,
मैं हुआ बेरंग ।
कमरा काल कोठरी लगता
हूँ बहुत बेचैन ।।

शब्दों का यह खेल है कैसा!

समीर उपाध्याय

शब्दों का यह खेल है कैसा!
कोई ना ताकतवर इसके जैसा।
शब्द
कभी वसंत बन जाए
चारों ओर गुलशन खिल जाए।
शब्द
कभी बरखा बन जाए
खेतों में हरियाली लाए।
शब्द
कभी बाद-ए-बहार बन जाए
मन को प्रफुल्लित कर जाए।
शब्द
कभी नफ़ीरी बन जाए
सात सुरों का संगम सुनाएं।
शब्द
कभी अमृत बन जाए
रूह की खूबसूरती बन जाए।
शब्द
कभी इबादत बन जाए
खुदा की इनायत हो जाए।

शब्द जब शत्रु बन जाए

समीर उपाध्याय

समीर उपाध्याय
मनहर पार्क: 96/ए, चोटीला: 363520,
जिला: सुरेंद्रनगर, गुजरात
दूरध्वनि: 9265717398, अणुमेल:
s.l.upadhyay1975@gmail.com

शब्द जब शत्रु बन जाए
शब्द संभले संभल ना पाए।
शब्द काम में अंध बन जाए
चरित्र पर कलंक का टीका लग जाए।

शब्द जब शत्रु बन जाए
शब्द संभले संभल ना पाए।
शब्द क्रोध की ज्वाला बन जाए
सब कुछ जलाकर ख़ाक कर जाए।

शब्द जब शत्रु बन जाए
शब्द संभले संभल ना पाए।
शब्द मोह की कंदरा में फंस जाए
बाहर निकलने का रास्ता ना मिल पाए।

शब्द जब शत्रु बन जाए
शब्द संभले संभल ना पाए।
शब्द माया की नगरी में भटक जाए
चक्रव्यूह से कभी बाहर ना निकल पाए।

शब्द जब शत्रु बन जाए
शब्द संभले संभल ना पाए।
शब्द मद की मदिरा का पान कर जाए
शान-भन सब कुछ भूल जाए।

शब्द जब शत्रु बन जाए
शब्द संभले संभल ना पाए।
शब्द ईर्ष्या का अंगारा बन जाए

सब बदल गया है

जितेन्द्र 'कबीर'

आजादी के परवानों ने
कुर्बान किया खुद को
जिनकी खातिर,
उन आदर्शों के लिए
देश के लोगों का अब
ईमान बदल गया है,
राजभक्ति कहला रही है देशभक्ति
यहां पर अब,
बदली हुई परिस्थितियों में
देशभक्ति का प्रतिमान बदल गया है।

विरोध को दिया गया है
गद्दारी का दर्जा
और आन्दोलन का देशद्रोह से
नाम बदल गया है,
क्रांति के नाम पर लोग
बदलते हैं केवल अपने दल ही
यहां पर अब,
बदली हुई परिस्थितियों में
क्रांति का परिणाम बदल गया है।

गरीब अब भी तरस रहे हैं

दो वक्त की रोटी को,
और पूंजीपति चतुर बनकर
मुखौटा बदल गया है,
सेवा के नाम पर नेता
बटोरते हैं केवल वोट ही
यहां पर अब,
बदली हुई परिस्थितियों में
सेवा का दाम बदल गया है।

काबिलियत और शिक्षा की
पूछ कम हो रही
भीड़ तंत्र जनतंत्र का भेष
बदल गया है,
दलगत वफादारी के ईनाम में
बंटते हैं संवैधानिक पद
यहां पर अब,
बदली हुई परिस्थितियों में
चापलूसी का ईनाम बदल गया है।

जितेन्द्र कुमार
गांव नगोड़ी डाक घर साच
तहसील व जिला चम्बा
हिमाचल प्रदेश
साहित्यिक नाम - जितेन्द्र 'कबीर'
संप्रति - अध्यापक, संपर्क सूत्र - 7018558314

लौटकर आयेगा

अलका 'सोनी'

अलका 'सोनी'
बर्नपुर, पश्चिम बंगाल
पता - C-1/4, रोड नम्बर-1, रिवरसाइड टाऊनशिप बर्नपुर, आसनसोल। पश्चिम बंगाल। पिन-713325.
ईमेल-
alka230414@gmail.com
मोबाइल नंबर-7908651937
व्हाट्सएप - 7797390251

आज,
जो पीछे छूट रहा है
एक दिन
जरूर आएगा
जब लौटना होगा
उस रास्ते से वापिस
याद रखना
फिर मिलेंगी
पेड़ों की कतारें
सरसराते जंगल
बलखाती नदियां,
पीछे छूटता हर दृश्य
उभर आएगा
आंखों में फिर
जैसे तेज गति से चलती
गाड़ी जब लौटती है
उसे मिलते हैं
छूटे गांव और
वही ठहराव,
इसलिए जब मिलो
किसी से, अदब से मिलना
क्योंकि वे मिलेंगे दोबारा
यात्रा के अंतिम पड़ाव में....

दुनिया में...

सच कहती है वह,
उसी से जन्मी दुनिया में अनजान सी रहती है।
दूसरों को अस्तित्व देने वाली,
खुद की पहचान ढूंढती है।
वह जो रखती है अदम्य साहस,
खुद की बारी आने पर एक...
सहारा ढूंढती है।
अपनी ही रची इस दुनिया में,
वह अनजान- सी बेखबर घूमती है।
हर कर्म को निभाती है... समझकर कर्तव्य,
प्रतिक्षण खुद के ख्वाबों पर,
दूसरों की मंजिल बनाती है।
खोकर खुद को,
बुनती है नए ताने-बाने।
छोड़कर एक घर को ... दूसरे को बसाती है।
फिर भी ना जाने क्यों अपनी बसाई दुनिया में,
अनजान बनकर घूमती है...
अपनी ही पहचान ढूंढती फिरती है!!

जाग जा मनुष्य

गायत्री शर्मा

देख प्रकृति के न्याय को ,
क्यों बौखला गया ।
यह वही है ,
जो तूने इसे दिया ।
बड़े प्रेम से जो काटी,
तूने शाखाएं।
उजाड़ वन्यजीवो का घरौंदा ,
किया तूने नवनिर्माण।
बर्बाद किया प्राकृतिक संपदा को
और किया अभिमान।
सोचा न होगा तब तूने,
इसका परिणाम।
मति... अंध के साए में थी तेरी,
भ्रमित थी तेरी पहचान।
समय समय पर मिली चेतावनी तुझे,
बाढ़ ,अकाल ,भूकंप के रूप में
पर ...तू फंसा था,
भौतिक स्वरूप में।
अब भी जाग जा मनुष्य,
वरना बहुत बुरा होगा अंजाम।
अभी तो अंतिम संस्कार से,
अपनो को वंचित किया।
फिर ऐसा न हो कि,
शर्मशार हो वो
जिसने तुझे सृजित किया।

सीख

गायत्री शर्मा

उड़ता चाय का धुआं सिखाता है
गुस्से की बातों को हवा में उड़ाना।
उबलता दूध सिखाता है
उफनकर नीचे गिर जाना।
अस्तित्व की लड़ाई सीखो बांस से...
झुक कर फिर खड़े हो जाना।
प्रेम की परिभाषा सीखो सारस से ...
एक नहीं तो दूजे का खत्म हों जाना।
देकर भूलना सीखो जानवर से,
तो प्रकृति से सीखो.. न्याय करना।
चींटी से सीखो निरंतर प्रयास करना,
तो पुस्तक से..सीखो बिना बोले ज्ञान देना।
सीखना है तो सीखो प्रकृति के हर कण से
जो सीख देता हमें अनमोल।

गायत्री शर्मा

आप आइजैक न्यूटन ग्लोबल विद्यालय, वसई पश्चिम में हिंदी अध्यापिका के रूप में कार्यरत हैं। सामना पत्रिका में आपकी कविताओं का लगातार प्रकाशन हो रहा हैं। कई कविता प्रतियोगिताओं और भाषण प्रतियोगिताओ में आप समय समय पर पुरस्कृत होती रहीं है। आपकी रचना में देश के चल रहे हालातों को लेकर चिंता की परछाई स्पष्ट दिखाई देती है। साथ ही वह अपने अध्ययन काल में कई कविता प्रतियोगिताओं और भाषण प्रतियोगिताओ में पुरस्कृत हुई है। आपकी रचनाओं में जीवन में हर वस्तु हमें कुछ न कुछ सिखाती है की सीख तथा स्त्री के विभिन्न रूप देखने को मिलते है।

तुम्हारा होना

सलिल सरोज

मेरे ना होने से तुम्हारा होना कैसे हो जाएगा
देखें , बग़ैर आँखों के रोना कैसे हो जाएगा

उचटी नींदों , आधे ख़्वाबों , अकेली सी रातों
ख़ामोश सिलवटों से बिछौना कैसे हो जाएगा

घड़ी दो घड़ी को तुम, तुम लग सकती हो
लेकिन, यह वारदात रोज़ाना कैसे हो जाएगा

लाली,बिंदी, सुर्खी,मेंहदी,चूड़ी, कंगन सब ठीक है
पर मेरे देखे बिन तुम को सजाना कैसे हो जाएगा

कुछ खतों, कुछ तस्वीरों, कुछ लम्हों ,कुछ सामानों से
तुम्हारे साथ बनाए यादों का हर्जाना कैसे हो जाएगा

तुम्हारे होने से ही कुछ और होने का मतलब है
छत और दीवारों से आशियाना कैसे हो जाएगा

सलिल सरोज
नई दिल्ली

जरूरतें भी ना ले पाए

प्रियंका कृष्णकांत दूबे

बचपन से एक झोला लेके,
न जाने कौन सी बस्ती चले आए,
ख्वाहिशों के बाजार में,
जरुरतें भी न ले पाए।

बेफिक्री की दुनिया छोड़ी,
ख्वाबों से नाता जोड़ लिया ।
ना ख्वाब मिले, ना वो रिश्ते,
जिनपर हमको था गुमान बड़ा,
इक ठोकर ने बतला ही दिया,
जब पास तेरे कीमत ही नहीं ,
तो तू सबसे कंगाल बड़ा।

दुनिया के माया जाल में हम,
बचपन को पीछे छोड़ आए,
ख्वाहिशों के बाजार में हम,
जरूरतें भी न ले पाए।

आईने में देखा जब खुद को,
हम बार-बार बस पछताए।
काश वो बीता हुआ मेरा पल, बचपन
बनकर फिर लौट आए।
ना कल की चिंता हो मुझको ,
ना आने वाला कल सताए,
खुशियों को खरीदें बेफिक्रे से,
जीवन में जीवन का रंग आए।

बचपन का एक झोला लेकर,
न जाने कौन सी बस्ती चले आए,
ख्वाहिशों के बाजार में हम,
जरूरतें भी ना ले पाए।

प्रियंका कृष्णकांत दूबे
पता :- अरिहंत दर्शन विंग बी,306, शिलफाटा रोड, खोपोली, रायगढ़, महाराष्ट्र, 410203,
दूरध्वनि - 8796464279
ईमेल - pri-yadubey98pd21031993@gmail.com

नारी को नारी नहीं समझती....

शिवांगी सक्सेना

एक स्त्री स्त्री होने के बावजूद
जब उसके भ्रूण की जाँच करवाती है।
गर्भ में लड़का पल रहा या लड़की
इस बात पर हर पल उसे ताना मारती है।
तब वह कोमल हृदय की नारी यही सोचती है
नारी होकर भी मुझको नारी क्यूँ नहीं समझती है।

एक स्त्री स्त्री होने के बावजूद
जब उसे जीवित अग्नि में झोंकती है।
ग़रीबी का रोना रोकर दहेज की माँग रखकर
बेटे से दूर रखकर बहु को प्रताड़ित करती है।
तब उस लाचार और विवश नारी यही सोचती है
नारी होकर भी मुझको नारी क्यूँ नहीं समझती है।

एक स्त्री स्त्री होने के बावजूद
अपनी ही भाभी को प्रताड़ित करती है।
भाई भाभी के व्यक्तिगत जीवन मे क्लेश भरकर
भाभी के विरुद्ध अनिष्ट व्यवहार से भड़काती है।
तब अन्तर्मन के दर्द से भरी वह नारी यही सोचती है
नारी होकर भी मुझको नारी क्यूँ नहीं समझती है।

शिवांगी सक्सेना
पद: (लिपिक)
पता: नगर पालिका परिषद बहजोई, जनपद—सम्भल, उत्तर प्रदेश

बेटियां

खुशी वार्ष्णेय

हर घर की शान होती हैं बेटियां
एक पिता का अभिमान होती हैं बेटियां
जिंदगी को खूबसूरत तरीके से सजाती हैं ये
हर घर को स्वर्ग बनाती हैं ये
इसलिए एक नहीं दो दो घरों की जान होती हैं बेटियां
हर घर की शान होती हैं बेटियां।

बेटी जिस घर में आए
अपने साथ बरकत ही बरकत लाए
कहने को कहदो परंतु वास्तव में
घर में आने वाली खुशियों का फरमान होती है बेटियां
हर घर की शान होती हैं बेटियां।

मां की दुलारी होती हैं ये
भाइयों की प्यारी होती हैं ये
कहने को बेटों के सामने बेटियों का कोई खास मोल नहीं पर भूल जाते हैं हम
की उन बेटों को पैदा करके जीवन देने वाली भगवान के ही समान होती है बेटियां
हर घर की शान होती हैं बेटियां।

खुशी वार्ष्णेय
विद्यार्थी, बी. ए., तृतीय वर्ष, हिंदी विभाग, जानकी देवी मेमोरियल महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

गुरुकुल

ज्योति

गुरु की छड़ी फिर लगनी चाहिए
वो हाथ की हथेलियां लाल पडनी चाहिए वो गुरुकुल का दौर फिर आना चाहिए
बस गुरु का ज्ञान हो साखाओं का साथ हो
वह पेड़ की छांव में सबक सीखना
कभी गुरु के साथ रहे दिन भर सीखना
वह गुरुकुल का जमाना फिर वापस आना चाहिए
ना जिंदगी में भागमभाग होना नौकरी पाने की होड़ हो
बस अच्छे इंसान बनने तो कभी कर्तव्य धर्म निभाने की चाह होनी चाहिए
बस यह सब ज्ञान फिर से मिलना चाहिए गुरुकुल का जमाना फिर से आना चाहिए
जो भटके हैं राह में उन्हें मंजिल मिलनी चाहिए
स्वार्थ ,असंतोष ,द्वेष सब का नाश होना चाहि ए
वो गुरुकुल से ज्ञान फिर से मिलना चाहिए वह गुरुकुल का जमाना फिर वापस आना चाहिए
गुरुकुल से ज्ञान फिर से मिलना चाहिए

ज्योति
जन्म 29 दिसंबर 1999
शिक्षा बारहवी , स्नातक दिल्ली विश्वविदयालय
रिवरसाइड टाऊनशिप

न जाने क्यूँ! चाँद मुस्कराने लगा...

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
पता-ग्राम-कैतहा, पोस्ट-भवानीपुर, जिला-बस्ती 272124 (उत्तर प्रदेश)
शिक्षा -बी. एससी., बी. एड., एल. एल बी., बी टी सी.
(शिक्षक, साहित्यकार व सामाजिक कार्यकर्ता)
मोबाइल 7355309428
ईमेल laldeven-dra204@gmail.com

चाँदनी रातों को अब भी
किसी का इंतजार करता हूँ
न जाने क्यूँ अभी भी तुमसे
उसी चाहत से गुजरता हूँ
शायद दिल के किसी कोने में
अब भी तुम्हें प्यार करता हूँ
जब कि अच्छी तरह से वाकिफ हूँ
जानता हूँ, कि तुम्हें अब आना नहीं है
पता नहीं फिर क्यूँ! ये बेचैनी छाई है...

आज मैंने चाँद से कह दिया है
कि मेरे छत पर चाँदनी मत किया करो
क्योंकि इसी चाँदनी रात में हमने एक दूजे से
प्यार का इजहार किया था
अनगिनत बार एक दूजे से मनुहार किया था
तुम्हें जीवनसाथी बनाने का करार किया था
चाँदनी रातों में तुम भी तो चाँद हो जाया करती थी
न जाने कितनी बातें सुना कर मुस्कराया करती थी
मुझे तो तुम्हारे साथ बिताए वो सारी चाँदनी रातें याद है
उन सुनहरे लम्हों को वापस करने चाँद से फरियाद है...

कोई आहट होने पर तुम आती हुई लगती हो
कहीं न कहीं लगता है कि शायद तुम फिर आओगी
फिर जोर-जोर से खिलखिलाओगी
और सारा कायनात महक उठेगा
फिर तुम्हारे सहारे मैं जिंदा हो जाऊँगा
एक दूजे से किया वादा निभाऊँगा
चाँदनी रातों में फिर साथ नई उड़ान होगी
सच में फिर से जी भर बातें करूँगा और गीत गाऊँगा
तुम पर नई कविताएँ बनाऊँगा
इतना कहने पर न जाने क्यूँ! चाँद मुस्कराने लगा
शायद उसे हमारे प्रेम पर विश्वास है
तुम्हारे वापस आने का उसे भी आस है...

क्या! दुश्वारियों में जीता रहेगा किसान...

'किसान' जेहन में उभरता एक नाम
दिन भर खेतों में करता रहता काम
कब सुबह, कब हुई शाम
उसे न मिलता कभी आराम
किसान करता है, सच में चमत्कार
सभी के ऊपर करता है उपकार
धरा का सीना चीर कर उगाता है अन्न,
जिसे खाकर हम जीवन जीते हैं
हम सब रहते हैं प्रसन्न...

शायद अपने भारत देश में किसान से बड़ा
कोई नही है मेहनतकश

उसका जीवन फिर भी गरीबी में रहने को है विवश
किसानों का न कोई है पुरसाहाल
सरकार भी न रखें उचित ख्याल
ठंडी, गर्मी व बरसात की परवाह न कर
वो अनाज उगाते हैं
जी तोड़ परिश्रम कर अन्न घर लाते हैं
इतने परिश्रम के बावजूद, किसानो की
हालत रहती है खस्ताहाल
उनका अनाज बेचकर, व्यापारी होते मालामाल
जय जवान, जय किसान का कहाँ गया नारा
किसान दुर्दशा में मारा फिरता बेचारा...

अनाज के उत्पादन पर चले उसके घर की जिम्मेदारी
बाढ़, सूखा और अतिवृष्टि बढ़ाते उसकी लाचारी
आखिर क्यूँ! किसान ही आत्महत्या करता है
वही क्यूँ! दुश्वारियों में जीता मरता रहता है...

बेटी को करवाना हो शादी के फेरे,
बेटे व बेटी को उच्च शिक्षा दिलाने के
अरमान रहते हैं अधूरे
क्या ? कभी किसानों को भी खुशियाँ मिलेंगी
या उसकी लाश कर्ज में ही जलेगी
उसके चेहरे पर कभी आएगी मुस्कान
या वर्षा की आस के लिए देखता रहेगा आसमान
क्या? कभी किसान भी अपने घर में
खुशियों का दीपक जलाएगा
वो भी अपना सुखी संसार बनाएगा...

मैं कवि बनना चाहता हूँ...

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

एक कवि चाहता है...
भावी पीढ़ी में हो सभ्यता व संस्कार
माता पिता या हो घर के बुजुर्ग
तो उन्हें मिले सम्मान व सत्कार
लोगों के हम दुःख दर्द बाँटे
और हम अपनों को करें प्यार
इसलिए मैं कवि बनना चाहता हूँ...

एक कवि चाहता है...
सकल विश्व का हो कल्याण
स्व राष्ट्र की हो हो पहचान
सभी को मिले ख़ुशियाँ
न हो कोई जन दुःखी व परेशान
हमारा राष्ट्र बने महान
इसलिए मैं कवि बनना चाहता हूँ...

एक कवि चाहता है...
हमारे देश में न पनपे भ्रष्टाचार
सभी को मिले उसके पूर्ण अधिकार
बेवज़ह न हो कोई गिरफ़्तार
सभी का हो सुखी संसार
इसीलिए मैं कवि बनना चाहता हूँ...

एक कवि चाहता है...
देश व पूरे संसार में फलित हो लोकतंत्र
कोई भी किसी के हक़ को
मारने के लिए न करें खड़यंत्र
अपनी आवाज़ बुलंद करने के लिए
हर व्यक्ति हो स्वतंत्र
तानाशाही का न हो राजतंत्र
इसीलिये मैं कवि बनना चाहता हूँ...

एक कवि चाहता है...
राष्ट्र व समाज का सदैव हो विकास
कभी नहीं चाहता कि कि हो विनाश
अपने शब्दों से लोगों में जगाता है विश्वास
परिवर्तन की चाहता है आस
मुश्किलों में भी कवि न होता है निराश
इसीलिए मैं भी कवि बनना चाहता हूँ...

एक कवि चाहता है...
आमजन में न हो ख़ुशियों का अभाव
ख़ुशहाली का चहुँओर हो प्रभाव
समरसता और भाईचारा हो
और आपस में हो सद्भाव
एक दूजे से मिलने में हो चाव
दुःख और दर्द के गहरे न हो घाव
इसीलिए मैं भी कवि बनना चाहता हूँ...

निषेध

डॉ सुखबीर सिंह शास्त्री

वो आँखे ही क्या जिनमें ख़्वाब न हो।
वो दिल ही क्या जिसमें जज़्बात न हो।
वो सावन ही क्या जिसमें बरसात न हो।
वो रिश्ता ही क्या जिसमें मुलाकात न हो।
वो भक्ति ही क्या जिसमें होता दीदार न हो।
वो दुश्मनी ही क्या जिसमें तकरार न हो।
वो भँवरा ही क्या जिसने किया गुञ्जार न हो।
वो नाव ही क्या जिसमें पतवार न हो।
वो प्रेम ही क्या जिसमें इकरार न हो।
वो युद्ध ही क्या जिसमें यलगार न हो।
वो म्यान ही क्या जिसमें तलवार न हो।
वो खेल ही क्या जहाँ होती जीत-हार न हो।
वो कीर्ति ही क्या होता जिसका प्रचार न हो।
वो बहाव ही क्या जिसमें मझधार न हो।
वो शिक्षा ही क्या जिससे शिष्य उपकार न हो।
वो रात ही क्या जिसमें अंधकार न हो।
वो जादू ही क्या जिसमें चमत्कार न हो।
वो धन ही क्या जिससे होता व्यापार न हो।
वो उपकृत ही क्या जिसने व्यक्त किया आभार न हो।
वो पत्रकार ही क्या लिखा जिसने सत्य समाचार न हो।
वो रोग ही क्या जिसका कोई उपचार न हो।
वो शासन ही क्या जिसमें कोई सरकार न हो।
वो स्तम्भ ही क्या जिस पर कोई भार न हो।
वो मानव ही क्या जिसमें स्वदेश का प्यार न हो।

अधूरी कविता

डॉ सुखबीर सिंह शास्त्री

मैं उन बिन अधूरा, वो मुझे बिन अधूरे।
ये रातें अधूरी, ये बातें अधूरी।
फ़लक से जमीं तक सारे अधूरे, सितारे अधूरे नजारे अधूरे।
बिन चाँदनी जो चंदा अधूरा, चातक अधूरा बिन बादलों के। मैं तुम बिन .••••

ये बारिश की बूंदें बिन बादलों के, शीतलता बिन चंदन का जीवन।
सीप बिना ज्यों मोती न उपजे, कमल बिना न ताल की शोभा।
तप भी अधूरा बिन साधकों के, प्रकृति अधूरी पुरुष बिना ज्यों।
मैं उन बिन अधूरा वो मुझ बिन अधूरे..।

जल बिना जो मीन का जीवन,मोक्ष बिना जो ईश्वर की सत्ता।
बाती बिना न दीपक है जलता, पौन न पावें बिन चंवर डुलाये।
छन्द बिना ज्यों कविता अधूरी, पथिक बिना काहें की राहें।
मैं उन बिन अधूरा वो मुझ बिन अधूरे.••••••।
साथ तुम्हारा जो मिल जाए प्रियतम! हो जाये पूरा मेरा ये जीवन!
मैं उन बिन अधूरा वो मुझ बिन अधूरे.••••

08/08/2020
(जन्मदिन की रात में)

सुखबीर सिंह शास्त्री
विभागाध्यक्ष (संस्कृत विभाग)
राजीव गांधी राजकीय महाविद्यालय
साहा अम्बाला
दूरभाष 9541203432

कठपुतली

षैजू के

कठपुतली हो उसके हाथों की
फिर नाज़ नखरा कैसा
नाचो जैसे नाचना है
वह आका है तुम्हारा
धागे हैं उसके हाथों में
कभी दाएं कभी बाएं
कभी उत्तर कभी दक्षिण
करवाते हैं नौ रस की अभिनीत
जीवन के नाट्य मंच पर
हंसो या रोओ
प्रतिरोध करो या सह लो
नाचना तो होगा ही
क्योंकि कठपुतली है हम उसके हाथों की

षैजू के (शोध छात्र)
हिन्दी विभाग
कोच्चिन विश्वविद्यालय कोच्चि, केरल- 682 022,
सम्पर्क - shyjukas@gmail.com, मो. 9656398746

आईना

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा

आंखों में आंखें डालकर
सच को सच दिखाता आईना

चेहरे पर लगे हों मुखोटे हजार
क्षणभर में हटा देता आईना

बड़ी खामोशियत से कहता
लेकिन कौन सुनता बात आईना

हर बुराई से पर्दा उठाता
फिर पत्थर खाकर टूटता आईना

टुकड़ों -टुकड़ों में टूटता-बिखरता
लेकिन तब भी मुंह चिढ़ाता आईना

इंसान बनाले अपने हृदय को आईना
तो खुद भी देखे, औरों को भी दिखाये आईना

आंखों में आंखें डालकर
सच को सच दिखाता आईना

नदियाँ

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा

कल-कल ध्वनि मृदुल सुनातीं नदियाँ ।
घर्र-घर्र कर बरसात में डरातीं नदियाँ ।।

इठलातीं /
बलखातीं /
इतरातीं नदियाँ !

मीलों सफर तय करतीं नदियाँ ।
ये कभी नहीं थकती नदियाँ ।।

अमर कहानी कहतीं /
कर्म निरंतर करतीं /
गतिमय रहो सिखातीं नदियाँ !

सदा अविरल बहती रहतीं नदियाँ ।
जग का उपकार करती रहतीं नदियाँ ।।
वेद- पुराण सब महिमा गाते नदियाँ ।
भारत में देवी सम पूंजी जातीं नदियाँ ।।

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा
ग्राम रिहावली, डाकघर तारौली गुर्जर,
फतेहाबाद, आगरा 283111
ईमेल : - mukesh123idea@gmail.com

बरसे यादों में प्रीति तुम्हारी

बृजेश आनन्द राय

अंम्बर से बादल बरसे
बरसे यादों में प्रीति तुम्हारी।

सिक्त-सुमन, तुहिन-विम्ब सी
सद्यःस्नाता, वर्षा-मज्जन की
सदा स्मृति में बसी हुई छवि
जलक्रीड़ा से सिहरे तन की

प्रकृति-प्रदत्त, सहज-संरचना
सर्व-सुन्दरता ही जीत तुम्हारी

अंतरिक्ष से बरस गयी जो
पाकर धरती सरस गयी जो
कण-कण में बिखर-निखर
कहीं रुकने को तरस गयी जो

छुई-अनछुई आत्मप्रफुल्लित
ज्योत्सना सी तुम सुकुमारी!

चहक-महक-खनक-धनक सी
दिव्य-रूप की अमित-हनक सी
नीलोत्पल-दृग, शोभा-सुकून
स्वर्णिम-तन, तड़ित-दमक सी

उन्मुक्त तन, अनुरक्त मन
स्वर्ण-गगन सी रीत तुम्हारी।

बृजेश आनन्द राय
जौनपुर, उत्तर-प्रदेश
दूरध्वनि- 9451055830

गज़ल

दूर मुझसे न जा वरना

निज़ाम-फतेहपुरी

दूर मुझसे न जा वरना मर जाऊँगा।
धीरे-धीरे सही मैं सुधर जाऊँगा।।

बाद मरने के भी मैं रहूंगा तेरा।
चर्चा होगी यही जिस डगर जाऊँगा।।

मेरा दिल आईना है न तोड़ो इसे।
गर ये टूटा तो फिर मैं बिखर जाऊँगा।।

नाम मेरा भी है पर बुरा ही सही।
कुछ न कुछ तो कभी अच्छा कर जाऊँगा।।

मेरी फितरत में है लड़ना सच के लिए।
तू डराएगा तो क्या मैं डर जाऊँगा।।

झूठी दुनिया में दिल देखो लगता नहीं।
छोड़ अब ये महल अपने घर जाऊँगा।।

मौत सच है यहाँ बाकी धोका निज़ाम।
सच ही कहना है कह के गुज़र जाऊँगा।।

निज़ाम-फतेहपुरी
ग्राम व पोस्ट मदोकीपुर
ज़िला-फतेहपुर (उत्तर प्रदेश)
6394332921, 9198120525

लघु कथा

घुन

दलजीत कौर

अच्छा ख़ासा हँसता -खेलता घर था। बड़े बेटे की शादी को आठ साल हो चुके थे ।दो प्यारे बच्चे थे घर में ।शायद ही कोई दिन हो जिस दिन कोई मेहमान न आता हो उस घर में। लोग परिवार को देखकर रश्क करते थे। सुख -सम्पत्ति, वैभव सब था।

छोटे बेटे की शादी हुई। सुंदर, सुशील, संस्कारी बहू आई। किसी के सामने मुँह तक न खोलती। बस पति को ही पट्टी पढ़ाती। सास को हर बात बताती। जानती थी सास के अधीन ही तो है सब कुछ। यहाँ तक कि ससुर जी भी। ऐसा व्यवहार करती जैसे सास के बिना है ही नहीं कोई उस घर में। सास को भी धीरे-धीरे बस यही बहू दिखने लगी पूरे घर में।

ऐसी कलह शुरू हुई कि घर तिनका-तिनका हो कर बिखर गया। घर के सभी सदस्य आपस में लड़ने लगे। मगर मज़ाल है कि इसने कभी एक शब्द भी कहा हो।

कल एक बुआजी आई घर में। जिन्होंने इस घर का बनना भी देखा था और उजड़ना भी। बोलीं- "घुन गेहूं में ही नहीं, घरों में भी लग जाता है।"

घर

दलजीत कौर

मेरी सहेली के ससुराल में सब कुछ था ।पर नीयत कुछ कम थी ।सब कुछ होते हुए भी। सास-ससुर जी के किराये के लालच के कारण उन्हें दस-बारह साल मकान के दो कमरों में गुज़ारने पड़े। पति अच्छे हैं। इसलिए दो कमरों में भी ज़िंदगी खिलखिलाती रही।

उसकी ममेरी बहन ने कई साल पहले बड़ा-सा मकान ख़रीदा। वह हर बात में उससे बेहतर दिखना व दिखाना चाहती थी। उसे कार चलाते देख ख़ानदान में कई लड़कियों-बहुओं ने कार चलानी सीखी। कहीं वह आगे न निकल जाए। उससे प्रतिस्पर्धा बनी रही।

कुछ समय पहले उसने एक मकान लिया और उसकी ममेरी बहन आई। उससे बर्दाश्त नहीं हुआ। बोली-"सारी ज़िंदगी तो तुमने डेढ़-पौने दो कमरों में गुज़ार दी। अब बड़े मकान का क्या फ़ायदा।"

हम उसके जीवन का सत्य जानते हैं। उसे बड़े मकान में कभी दो पल का चैन नहीं मिला ।पति से बनती नहीं। हर समय का क्लेश।

मेरी सहेली को बुरा लगा। पर वह चुप रही। उसके पति चुप नहीं रहते। बोले-"मकान चाहे डेढ़-पौने दो कमरों का था।चाहे अब बड़ा है और आगे और बड़ा होगा। पर परमात्मा का शुक्र है कि उसमें घर हमेशा बसा रहा। कलह-क्लेश नहीं हुआ। घर और मकान में यही अंतर है।"

सन्नाटा छा गया। मेरी सहेली भी कम्प्यूटर पर सुंदर अक्षरों में 'घर' शब्द लिखने में मशगूल हो गयी।

डॉ दलजीत कौर
पी एच डी (हिंदी), पंजाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़
दस साल अध्यापन के बाद स्वतंत्र लेखन
#2571/40सी, चंडीगढ़, 9463743144

कहानी

मुझे धर्म देखा गया इंसान नहीं

पायल कुमारी

"इस जूझते वक़्त में हम सबने सिर्फ अपनी ही नहीं दूसरों की ज़िम्मेदारी को भी कई हद्द तक संभाला हैं" काश ऐसा मैं कुछ कह सकती लेकिन कड़वी सच्चाई के साथ स्वीकार्य यही है कि समाज हमसे नहीं बल्कि हम समाज के बदोलत हैं लेकिन याद रखें ये समाज आपका पेट नहीं पालता....

रोज़ की ही तरह रहीम काका हमारे मोहल्ले में मौसमी सब्जियाँ बेचने आते रहे हैं, पहले सिर्फ सब्जियाँ लेकिन महामारी को देखते हुए अब जरूरत की कुछ घरेलू चीज़े भी बेचने लगे हैं ताकि लोगों को घर से बाहर कम निकलना पड़े. "80 साल के उस बुजुर्ग के बेटा, बहू के मर जाने के बाद उनकी सन्तान को वही सम्भाले हुए हैं पोते और पोती को जैसे तैसे रूखा सूखा खिला कर पाल रहे हैं" नेक हृदय के रहीम काका घर तक समान पहुचाने के पैसे तक नहीं लेते।...

सुबह से एक खबर ने सनसनी फैल दी कि "कुछ मुस्लमान समुदाय के लोग हिन्दुओं को खत्म करने के लिए महामारी को फैला रहे हैं" खबर को गम्भीर लेते हुए कड़ी निगरानी शुरू कर दी गई। क्यूंकि मामला महामारी का नहीं "धर्म" का बनता जा रहा था। स्थानीय लोगों ने मुसलामानों का आना वर्जित कर दिया और जो आस - पास दिखते थे उनकी लाठियां और डांडों ने खूब पिटाई की जाती थी।

तबीयत खराब होने की वजह से रहीम काका आज 3 दिन बाद मोहल्ले में अपने काम को दुबारा लौट रहे थे ताकि लोगों की मदद भी हो जाए और घर में दो भूखे बच्चों का भी पेट पल जाए। मोहल्ले के पास पहुंचते ही उन्हें वहां रोक दिया गया और कहा गया कि आप यहाँ मुसलमानों का आना और उनके द्वारा दी गई चीजों को खरीदने की मनाही है रहीम काका एक अच्छे इंसान थे और मोहल्ले के लोगों को अपना समझते थे उन्होंने बात मज़ाक में टाल दी और अंदर चले आए।

आज उनके दिए समान लोगों के घरों के सामने पड़े रहे लेकिन किसी ने भी उसे उठाया नहीं। वो आवाज़ लगा कर मोहल्ले के लोगों को बुलाने लगे इतने में ही कुछ लड़के हाथों में डंडा लेकर उनकी तरफ बढ़े रहीम काका थोड़े पीछे हट गए लेकिन जैसे ही वो कुछ बोलते उनमें से एक लड़के ने उनकी पीट पर वार कर दिया और उनके सब्जी और सामान की रेडी भी फैला दी बेचारे दर्द के साथ जमीन पर गिर गए लेकिन कोई उनकी मदद करने नहीं आया।

लड़कों ने उन पर इल्ज़ाम लगाया कि ये भी मुस्लमान हैं और उनके द्वारा बेची गयी चीजों में जहरीली और मिलावटी पदार्थ हैं जिसे खाकर मोहल्लेवासी बिमार और संक्रमण के चपेट में आ सकते हैं। रहीम काका सबके पैरों में गिर कर बोलने लगें की आप चाहें तो जांच करा लीजिए मेरे लाए सामानों की, ये पूरे मोहल्ले को वो अपना घर समझते हैं

"सुषमा जी के बेटे को संक्रमण होने पर जब पूरे परिवार को क्वारंटाइन कर दिया गया तो मोहल्ले के लोगों ने भी दूरी बना ली तब रहीम काका ही जरूरत सारी चीज़ें उनको लाकर देने लगे और उस परिवार का खूब ध्यान रखा।" "शर्मा जी के लिए भी रोज दवाई और इंजेक्शन का इंतजाम भी रहीम काका करते थे"

रहीम काका सिर्फ जो सामान बेचते थे उनके ही पैसे लेते थे कभी अपनी सेवा की कीमत नहीं माँगी लेकिन आज उन्हें उनके धर्म से आंका गया ना कि कर्मों से। रोते रोते वो फैली हुई सब्जियों और सामान को लेकर वहां से चले गए। घर में बच्चे भूखे थे इसलिए अपने दर्द को भूल कर वो दूसरे गली, मोहल्ले में सब्जी बेचने चले गए लेकिन कोई भी उनसे सब्जी या कोई सामान नहीं लेता था। थक हार के वो घर को आ गए और बच्चों को खुद से लिपटा कर बहोत रोये की सबको "मैं धर्म नजर आया लेकिन इंसान नहीं"

उनके घर के भूखे बच्चे तक नहीं दिखे क्या धर्म इतना निर्दयी हो सकता है कि किसी की भूख और दर्द को दिखने नहीं देता। रात पानी पिलाकर और उन्हीं गली- कुचली सब्जियों को बना कर अपने भूखे पोते - पोती को परोस दिया और कल सुबह की उम्मीद के साथ सो गए।

समीक्षा :- कभी कभी आपके अच्छे-बुरे कर्म मायने नहीं रखते की आपके साथ क्या हो रहा है! हम सब जानते हैं कि शरीर में बहने वाला रक्त, फिर चाहे वो किसी भी धर्म के इंसान के अंदर का है लाल ही होता है या फिर पसीना हो समान है फिर भी समाज में बनाए गए ये ये धर्म का नियम क्यूँ हमें अलग करता?

पायल कुमारी
हिंदी स्नातक (राम लाल आनंद महाविद्यालय)
पता :- मकान न. 108, गली न. 6 नियर आनंद पब्लिक स्कूल, महिपालपुर, नई दिल्ली 37...
ई मेल:- nayandeep1227@gmail.com
मोबाईल न. 7303335277

जी बी रोड की एक शाम

आदर्श कुमार

वक्त यही कोई शाम के सात बज रहे होंगे.....वल्लभ अपने दोस्त आदित्य के साथ बड़ी बहन को नई दिल्ली रेलवे स्टेशन छोड़ने जा रहा था। आठ बजे की ट्रेन थी उनकी..... साढ़े सात तक उनकी ट्रेन प्लेटफॉर्म पर लग गई थी तो अब ठहरने का कोई औचित्य नहीं था। मगर फिर भी आठ बजे तक बल्लभ और आदित्य ट्रेन के चले जाने तक प्लेटफॉर्म पर ही रुके रहे। ट्रेन के स्टेशन छोड़ते ही दोनों ने दीदी को हाथ हिलाकर टाटा कहा और बाहर निकलने लगे।

नई दिल्ली स्टेशन से अजमेरी गेट की तरफ बाहर निकले दिल्ली विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले दोनों लड़कों के मन में एक रिक्शे को देखकर उनकी एक पुरानी जिज्ञासा जाग गई.....उस रिक्शे पर लिखा था- 'जीबी रोड'.....

यार आदित्य...आज चलें क्या?

कहां...?

जीबी रोड ....और कहां!!

चल फिर....

पक्का !!

हां भई पक्का ...

वैसे वल्लभ पूरी तरह फैसला नहीं ले पा रहा था कि क्या करना चाहिए....पर सवाल करने की पहल उसी ने की थी तो पीछे कैसे हट सकता था....वो सोच रहा था कि आदित्य कुछ देर बाद मना कर देगा। इस लिए वो आधे अधूरे मन से ही चल पड़ा।

आगे चलने पर उन्होंने एक रिक्शे वाले से श्रद्धानंद मार्ग (दिल्ली के रेड लाईट एरिया जीबी रोड का दूसरा नाम, अक्सर वहां रहने वाले या दुकान चलाने वाले लोग

अपनी इज्जत बचाने के लिए इस नाम का इस्तेमाल करते हैं) का रास्ता पूछा। उसने कहा- आगे से बाएं चले जाइए....वो पूरा श्रद्धानंद मार्ग है।

आगे जाकर बल्लभ और आदित्य जीबी रोड पहुंच तो गए। मगर अब बल्लभ की धड़कनें बढ़ गई थीं। वो समझ नहीं पा रहा था कि वो क्या करे । उसने कहा- आदित्य वापस चलें क्या?

जवाब आया-चल बे स्साले फट्टू । जब इतना डरता है तो आया ही क्यों? ये देख लिखा है कोठा नं...कितना है। साफ दिख नहीं रहा। अंदर चलें। बोल

पहले तू जाकर दिखा?

अबे चल....मैं तो जा ही रहा हूं। चल

तू आगे चल मैं भी आता हूं।

आदित्य उस कोठे की संकरी सीढ़ी चढ़ने लगा। अब वल्लभ अपने आप को अकेला पाकर उसके पीछे पीछे चल दिया। आदित्य भी वल्लभ को महज़ अपनी काबीलियत दिखाने के लिए आगे जा रहा था। यूं तो डर उसको भी लग रहा था। मगर हिम्मत भी दिखानी थी.....उस कोठे की आधी सीढ़ियां चढ़ने के बाद आदित्य ने कहा-चल यार! वापस चलते हैं।

दोनों पीछे मुड़ते ही देखते हैं कि एक तकरीबन पचास साल की औरत पान चबाते हुए ऊपर आ रही थी। इन दोनों को देखकर उस औरत ने कहा-कहां जा रहे हो बेटे। आओ लड़कियां दिखा दूं। पसंद आए तो करना नहीं तो जबरजस्ती क्या है?

दोनों मजबूरन उसके साथ अंदर चले गए। उनके अंदर घुसते ही उस औरत ने दरवाजे बंद कर दिए। अंदर पंद्रह-बीस लड़कियां मौजूद थीं। तवायफें थीं।

ये नज़ारा देखकर दोनों के पसीने छूट गए। दरवाज़ा बंद और रात के नौ बजे का समय....वल्लभ तो ये सोचकर कांप रहा था कि कहीं घर से मम्मी का फोन न आ जाए। पढ़ना लिखना सब छूट जाएगा। बदनामी होगा सो अलग।

अब दोनों का गिड़गिड़ाना शुरू हुआ-आंटी जाने दीजिए हमें। हम बच्चे हैं। यहां पढ़ते हैं। प्लीज़ आंटी छोड़ दीजिए।

छोड़ दीजिए। अबे यहां कोई बच्चा नहीं आता.....छोड़ दीजिए, स्साला।

प्लीज़ आंटी जाने दीजिए। हम फिर कभी नहीं आएंगे। हम गलती से आ गए यहां।

अरे भड़ुओं.....हम रंडी हैं तो क्या हमारी इज्जत नहीं। निकालो अपना बटुआ।

इतना कहते ही दोनों से उनके बटुए छीन लिए गए। कुल मिलाकर छ सौ रूपये थे। दोनों का गिड़गिड़ाना जारी था-आंटी प्लीज़ हमें बहुत दूर जाना है। नॉर्थ कैंपस जाना है। बहुत दूर है।

मैं कुछ नहीं जानती, तुम दोनों में से कोई एक इनमें से किसी के साथ कर लो .....

आंटी हम शरीफ लड़के हैं .....हमें ये सब नहीं करना है। प्लीज़ आंटी हमें जाने दीजिए।

चुप हो जा। स्सालों....ये लो दो सौ रूपये,लौटा रही हूं। और दफा हो जा। दोबारा कभी मत दिखना इधर।

थैंक यू आंटी.....

थैंक यू के बच्चे तेरी मां का.....खिसक यहां से ...नहीं तो यहीं रोक कर भड़ुयागिरी कराएगी तुम दोनों से..

इस तरह मौका पाते ही वल्लभ और आदित्य वहां से रफूचक्कर हो गए। उस दिन उन दोनों को वो पचास साल की औरत भगवान लगने लगी.....वहां से निकलने के बाद उन्हें एहसास हुआ कि उस पल किस तरह उनकी पैंट गीली हो गई थी। और एक छोटी सी गलती या कहें कि बचकाना हरकत कितनी महंगी पड़ सकती है। जैसे कि एक लड़की मजबूरी या अनजाने में तवायफ में तब्दील हो जाती है।

आदर्श कुमार सिंह
सहायक प्रोफेसर(गेस्ट) ,
जनसंचार एवं मीडिया अध्ययन विभाग,
गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय,
ग्रेटर नोएडा, गौतम बुद्ध नगर (उत्तर प्रदेश)
संपर्क: adarshsingh.aks@gmail.com (ईमेल), 8800138990

विस्थापित सुदामा का जवाब

श्यामल बिहारी

वह अपनी चाय की दुकान के बाहर आक्रामक मुद्रा में खड़ा था। लगा किसी पर हमला करने वाला है। हाथ में पकड़े कागज को खोलता-पढता और फिर मुठ्ठी बांध लेता- कसकर! गुस्सा उसके चेहरे पर साफ झलक रहा था। जैसे किसी ने सुबह सुबह आकर उसके गाल पर दो चार जूते लगा दिये हों। मुठ्ठी खोली और मुंह से निकला- 'स्याले तेरी नोटिस की ऐसी की तैसी! पहले हमें विस्थापित किया, फिर घर से निकलने को मजबूर किया। अब अवैध कब्जा धारी बना दिया..!'

अगले ही पल कागज के टुकड़े हवा में उड़ते नजर आये थे और इसके साथ ही सुदामा हमेशा की तरह; डगरना उठा कर चल दिया था-खदान की ओर..! उगते सूरज के साथ ही सुदामा की दौड़ भी शुरू हो जाती थी। यह किसी अवसर विशेष अथवा कोई प्रायोजित दौड़ नहीं थी बल्कि यह एक जीवन दौड़ थी, जो सुदामा के हिस्से में आयी थी, इस दौड़ में सुदामा का एक युग बीत चुका था और बीत चुके थे उसके जीवन के बेहतरीन पल भी जो अब कभी अगले ही पल कागज के टुकड़े हवा में उड़ते नजर आये थे और इसके साथ ही सुदामा हमेशा की तरह डगरना उठा कर चल दिया था-खदान की ओर..!

उगते सूरज के साथ ही सुदामा की दौड़ भी शुरू हो जाती थी। यह किसी अवसर विशेष अथवा कोई प्रायोजित दौड़ नहीं थी बल्कि यह एक जीवन दौड़ थी, जो सुदामा के हिस्से में आयी थी, इस दौड़ में सुदामा का एक युग बीत चुका था और बीत चुके थे उसके जीवन के बेहतरीन पल भी जो अब कभी लौटकर आने वाला नहीं था। अब तो यह डगरना उठाव दौड़ सुदामा के जीवन का अहम हिस्सा बन चुका था। सुबह होते ही एक छोर से दूसरे छोर तक 'बावअना अवतार' की तरह वह पूरे खदान को नाप लेता था।

फिर दौड़ता हुआ होटल आता! इस जीवन दौड़ से सुदामा की देह का अंजर- पंजर सब ढीला पड़ चुका था । परन्तु सुदामा का दौड कभी बंद नहीं हुआ । चिलचिलाती धूप हो या कड़ाके की ठंड! मौसम का फर्क उसके ढीले ढाले कपड़ों के पहनावे से पता चलता था कि कौन सा मौसम चल रहा है!

एक दिन खदान में वह मुझे मिल गया था। बस एक ढांचा भर रह गया था- सूखकर! खान पान मिले पर बीवी साथ न हो तो जीवन भार लगने लगता है । उसे देख मुझे कृष्ण मित्र सुदामा की याद आ गई थी। पर यहां सुदामा तो था परन्तु उसे तारने-उबारने वाला कोई कृष्ण नहीं था। जो थे सबके सब कंस के समान ही थे। मैं भी सुदामा के लिए कहां कुछ कर सका था। बल्कि औरों की तरह मैं भी उसे सदमे की हालत में एक दिन छोड़ भाग खड़ा हुआ था।

बारह साल बाद जब इस कोलियरी में ट्रांसफर होकर आया तो एक बार फिर वही सुदामा मेरे सामने खड़ा था । जो कभी हमारा चौकीदारी किया करता था। वो हमारे जीवन के शुरुआती दौर का एक मात्र इकलौता गवाह भी था। वही सुदामा इस वक्त एक अडखा से दूसरे अडखा में जाकर मजदूरों के बीच चना- घुघनी बेच रहा था। उसके लड़खड़ाते कदम जीवन को धमकाता-धकियाता सा प्रतीत हो रहा था। उसे देख कर कौन यकिन करता कि इसी सुदामा का कभी भरा-पूरा एक परिवार भी हुआ करता था। उसके घर-दुकान के सामने लोगों की भीड़ लगी रहती थी । जहां घर में दो-दो बहनें और एक छोटा भाई भी था। और मालिक के रूप में उसकी मां की हुकूमत चला करती थी।

सुदामा पर नजर पड़ी, तब वह "हाईवाल" के बिल्कुल नीचे खड़ा दंगल सरदारों की ओर टकटकी लगाए देख रहा था कि कब कौन दंगल सरदार उसे अपने पास बुलाये और कब उन्हें वह चना-घुघनी खिला सके। इसी चना-घुघनी की बिक्री पर उसका अपना दाना-पानी जुड़ा हुआ था। सुरक्षा की दृष्टि से हाईवाल के नीचे खड़ा होना सेफ्टी की लिहाज से मैं सुदामा को डांट सकता था-खदान से भगा भी सकता था। परन्तु उसके कई एहसान थे मुझ पर और ऐसा मैं उसके साथ कुछ करना नहीं चाहता था। जिस सुदामा का घर-परिवार के बिखरे एक युग बीत चुका हो पत्नी और बेटे को अंतिम बार कब देखा हो जिसे यह भी याद न हो, उसे डांट कर भगाना। कहां तक उचित होता। ऐसा तो था सुदामा का जीवन जिसे वह जिये जा रहा था-घिसर घिसकर!

इधर साल डेढ़ साल पहले कोलियरी हाजरी घर के सामने उसने एक चाय-पकौडी की दुकान खोल रखी थी। अब रात भी वहीं सो लिया करता था ।घर नहीं के बराबर ही जाता था। यधपि सुदामा का घर बहुत ज्यादा दूर नहीं था। कोलियरी से महज डेढ़ दो किलोमीटर दूर पर था उसका घर। बीच में खदान, फिर एक छोटी सी पहाड़ी और तब था उसका अपना घर। उसके घर के सामने पूरब दिशा में सौ मीटर की दूरी पर एक पोखर था, जिसमें सालों भर साफ पानी रहता था, और जिसमें गरमी के दिनों में मांझिन -मोदिन औरतें आकर उसमें दिन भर घोंघा-घौंघी चुनती और माछ खांखरा भी पकड़ती रहती थीं।

मतलब कि घर तो था सुदामा का परन्तु घर में रहने वाले लोग एक एक कर गायब हो चुके थे । घर से एक एक कर ऐसे निकलते गये जैसे वह घर -घर नहीं कोई सराय हो ! फिर अकेला घर किस काम का? घर जाने के लिए सुदामा जब भी मन बनाता।

कानों में चीखने चिल्लाने लड़ने झगड़ने की तीखी आवाजें सुनाई देने लगती- "घर ही सब कुछ नहीं होता! जीने के लिए घर के साथ साथ और बहुत कुछ चाहिए होता है! जो तुम्हारे पास नहीं है" और वह जाने का इरादा बदल देता और दरी बिछाकर जमीन पर ही सोकर करवटें बदलते रहता था।

यह सब कुछ सुदामा के जीवन में अचानक से नहीं हुआ था। उसके साथ जो कुछ भी हुआ,सब जैसे सुनियोजित ढंग से होता रहा। पिछले बारह बरसों से वह नि:संग अकेला अलग थलग और अवसाद भरा जीवन जी रहा था । उसके दाम्पत्य जीवन में बिखराव की जमीन पर उसे चाय-पकौडे के साथ खाली गिलासें नाचती नजर आती और घर का वह दुकान जिस पर कभी उसकी मां बैठा करती थी अचानक से मछली बाजार में तब्दील हो जाती। सुनिता जिसे सुदामा अपनी सांसें अपनी धड़कन कहा करता था जो उसके जीवन को गति दिया करती थी। वही सुनिता एक दिन उसका सब कुछ उजाड़ चली जाएगी, सुदामा ने कभी ऐसा सपने में भी नहीं सोचा था। पर यह तो बहुत बाद की

बात है...! पहले से ही सुदामा अपने काका से कम परेशान नहीं था। साढ़े पांच एकड़ जमीन जिसमें उनका और उनके काका का घर भी शामिल था। एक दिन सीसीएल कंपनी ने उसे अधिग्रहण कर लिया। दो एकड़ के हिसाब से दो नौकरी औरबाकी बचे डेढ़ एकड़ जमीन का मुआवजा पर सहमति बनी थी। एक नौकरी और मुआवजे की पहली किस्त काका ने पहले ही हथिया लिया तथा "अब एक नौकरी और घर के बदले मिलने वाला घर तुम ले लेना" काका ने तब कहा था। लेकिन बहुत दिन नहीं बीता था तभी एक दिन काका की कारगुज़ारियों का पता चला। एक जाली कागजात तैयार कर काका ने अपने

बेटे को ही भतीजा बता कर दूसरी नौकरी भी हथिया लेने का पूरा पूरा बंदोबस्त कर डाला था। लेकिन मेरे एक घनिष्ठ मित्र जो पहले से ही सर्वे विभाग में काम करता था ने मामले का भंडाफोड़ कर दिया। सुदामा के काका के मंसूबों पर पानी फिर गया। परन्तु जिस तरह किसी दागदार लड़की को जल्दी से लड़का नहीं मिलता। सीसीएल भी विवादास्पद मामले में कंपनी जल्दी से नौकरी नहीं देती है। सुदामा के आवेदन पर " मामले की जांच के बाद कागजात अग्रसारित किया जाएगा।" कह मामले को दबा दिया गया। जो काफी दिनों तक दबा ही रह गया। लेकिन सुदामा का तो दम घुटने लगा था वो भला दबा कैसे रहता। उसके हक को छीना जा रहा था । काका उसके पूरे परिवार को बेघर करने और दूसरी नौकरी भी हथियाने में लगा हुआ था। और अगर वह अपने नापाक इरादे में कामयाब हो गया तो उसका पूरा परिवार सड़क पर आ जाएगा..!

विस्थापितों के साथ प्रबंधन की जोर जबरदस्ती और अपनी ही जमीनों को बचाने के कवायद! फिर प्रबंधन पुलिस की गठजोड़! ऐसी खबरें आये दिन अब अखबारों में छपती रहती। इससे भी सुदामा और घबरा उठा था। पहली नौकरी हथियाने के बाद उसके काका के नापाक इरादे काफी बुलंद थे। तभी एक दिन सुदामा बरमा क्षेत्र के विधायक और विस्थापित नेता आर पी सिंह के दरबार में जाकर माथा टेका! मदद की गुहार लगाई। जवाब में नौकरी हासिल करने के लिए "आमरण-अनशन" की उसे राह बतायी गयी और पूरी-पूरी मदद की बात भी कही गई थी उसे।

सीधे सादे सुदामा के लिए यह बड़ी बात थी। उसके घबराये मन को मन भर का हौसला मिला। वह बुलंदी की सोचने लगा था। ऐसा उसके हाव भाव देखकर लग रहा था। जोश में आकर उसने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था। जिला आयुक्त, सीसीएल सी एम् डी, क्षेत्रिय महाप्रबंधक, और कोलियरी प्रबंधन के नाम मांग पत्र प्रेषित कर निर्धारित दिन तिथि को पूरे परिवार के साथ कोलियरी के मुख्य गेट के पास वह आमरण-अनशन पर बैठ गया।

आषाढ़ का महीना था। एक ओर आसमान पर काले-काले बादल मंडरा रहे थे। दूसरी ओर उसके जीवन में काका काल की भांति मंडरा रहा था। धरना स्थल पर नेता जी की ओर से जो पहुंचा था वो था बलदेव गोसाईं! विधायक आर पी सिंह का झंडढोवा! मालढोवा! वह कोलियरी का बिजली मिस्त्री भी था। लेकिन कभी काम नहीं करता, विधायक के नाम पर हराम की महीना उठाता था। बात बात पर विधायक जी का आदमी हूं का धौंस जमाते रहता था । बड़ी बड़ी बातें करना खूब जानता था । पहले ही दिन उसने कहा- "अब, अफसरों पर कैसी आफत आती है देखना। सुदामा को तो नौकरी देना ही होगा।" " पता नहीं, सुदामा इस तरह नौकरी ले पायेगा !" लोग कयास लगा रहे थे। "यह गोसाईं के बच्चा से सुदामा को बच के रहना चाहिए था....!" लोग धरना पर कम -धरने पर बैठी सुदामा की पत्नी सुनीता की सुंदरता की चर्चा ज्यादा कर रहे थे। कभी कभी ऐसा जरूर होते देखा गया है कि हम सब के जीवन के किसी न किसी मोड़ पर कुछ ऐसा घटित हो जाता है और बाद में वहीं से सब कुछ फिसलता चला जाता है।

ऐसा ही कुछ सुदामा के साथ हुआ। अनशन के तीसरे दिन सुदामा की तबीयत काफी बिगड़ गई थी। बैठे-बैठे वह कभी आगे तो कभी पीछे लुढ़क जा रहा था। रक्तचाप ऊपर-नीचे हो रहा था। सांस लेनी मुश्किल हो रहा था। उसके साथ कुछ भी हो सकता था। उसको लेकर घर वाले घबरा भी रहे थे। फिर भी न प्रबंधन न प्रशासन अभी तक उसकी सुधि लेने आया था। और न उस बड़े नेता विधायक का अभी तक कोई बयान ही आया था जिसके कहने पर सुदामा ने अपना जीवन दांव पर लगा दिया था। न जाने क्यों?

हां उसकी खबर लेने लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ जरूर आया और लिखा भी फोटो के साथ "धरने पर बैठे सुदामा की हालत गंभीर! सुधि लेने वाला कोई नहीं?"

आखिर प्रशासन की दबाव पर प्रबंधन साप्ताह दिन के भीतर पूरा कागजात हेडक्वार्टर भेजने को राजी हुआ और सुदामा का अनशन भी खत्म हो गया था। लेकिन इसके साथ ही सुदामा के जीवन में ऐसी हलचल मची जिससे उसके हाथ से सब कुछ छुटता चला गया था। धरना अनशन के दिन से ही बलदेव गोसाईं का सुदामा के घर आना जाना काफी बढ़ गया था। वह सुदामा के दुकान में दोपहर को चाय नाश्ता करने जाता तो शाम तक वहीं बैठा रहता। इस बीच वह कई-कई कप चाय पी जाता और चोप खा जाता था। यह देख सुदामा की मां बहुत खुश थी पर सुदामा खुश नहीं हो पाता था। पहले यही बलदेव गोसाईं पैसे देने में आज कल आज कल करते रहता था। वही अब पैसा देने में जरा भी देर नहीं करता। महीना मिलते ही पैसा पहुंचाने चला आता। सुदामा की मां का खुश होना जायज था। लेकिन सुदामा को जाने क्यों यह नाजायज लगता। उसका दम फूलने सा क्यों लगता था? हालांकि बलदेव गोसाईं का यह बदलाव सुदामा की मां को भी समझ में नहीं आ रही थी फिर भी वह खुश थी- लक्ष्मी जो आ रही थी। मुझे अच्छी तरह याद है, सुदामा पहले भी जल्दी से मुंह नहीं खोलता था। उल्टे दुःखी होने पर भींगी लकड़ी में लगी आग की तरह धुंआता रहता था । यह मैं तब से जानता हूं जब वह हमारे गांव के स्कूल में अपनी बड़ी बहन सरिता के साथ पढ़ने आता था।

सरिता हमारी क्लास में पढ़ती थी और सुदामा एक क्लास पीछे था। लेकिन अपनी दीदी के साथ थैली की तरह सदैव लटके रहता था। स्कूल में भी और स्कूल के बाहर भी। खिसिया कर कभी कभी मेंढक पकड़ कर मै सुदामा की बेग में डाल दिया करता था। तब दोनों भाई बहन की हालत देखते ही बनता था। सरिता तो ज्यादा कुछ नहीं बोलती पर सुदामा गुस्से में गोबर पहलवान लगता था।

उस स्कूल में हम तीनों तीन साल तक साथ साथ रहे और साथ साथ पढ़े। सरिता और मैं कब इतने क्लोज़ हो गये किसी को भनक तक नहीं लगी । यह एक प्यार भरा एहसास था जो हम दोनों के बीच उग आया था जिसे सुदामा को खबर न थी। इस बीच कई बार मै सुदामा के घर गया- खाना भी खाया। लेकिन एक बात थी- सुदामा कभी हम दोनों को अकेला नहीं छोड़ता था । चौकीदार की तरह चौकन्ना रहता-हम दोनों चाह कर भी चोरी नहीं कर पाते थे। उसके घर के सामने वाले पोखर में हम तीनों कितनी बार नहाने उतरे तब भी सुदामा मल्लाह की तरह हमारे पीछे लगे रहता। कभी कभी हम दोनों पनडुब्बी वाला खेल खेलने लगते तो सुदामा सहम कर पोखर की आर पर बैठ हमें बगुले की तरह देखता रहता। उधर हम दोनों पानी के भीतर ही दोनों लिपट जाते और सांसें रोक गुत्थमगुत्था होने लगते और जब पानी के बाहर आते तो सुदामा की आंखें फेचा- उल्लू की तरह लगती थी।

अब सुदामा की मौजूदगी न मुझे पसंद थी न सरिता को। उस दिन दोपहर को स्कूल के पिछवाड़े बगीचे पर किसी बात पर हम दोनों हंस रहे थे। तभी सुदामा चौकीदार की तरह दबे कदमों में पीछे से आ पहुंचा।

“लो तेरा चौकीदार आ गया !” मैने कहा “सुदामा मेरे भाई तुम हमेशा मेरी चौकीदारी मत किया करो- मै कोई बच्ची नहीं हूं .जाओ अपने क्लास में, दूसरे बच्चे फस्ट सकैंड करने में लगे हैं और तुम मेरी चौकीदारी में समय बर्बाद करने में लगा है .!” पर वह हम दोनों को किसी तरह की छूट देने को तैयार नहीं! हमें ही अपने क्लास में जाना पड़ता था।

अभी हम दोनों के प्यार को पंख लगना बाकी था। अभी उमंगों के पंख के सहारे खुले आसमान में उड़ना बाकी था। अभी तो बस छुअन और चुम्बन का दौर चल रहा था कि तभी उमंगों पर अड़ंगा आ गया । सरिता की शादी की बात पक्की कर उसकी मां मामा घर से वापस आ गई थी। यह एक “गोलट” शादी थी। जिस लड़के के साथ सरिता की शादी तय हुई थी

उसी की बहन सुदामा की पत्नी और सरिता की भाभी बनकर उसके घर आ रही थी। स्कूल में हमारा आखरी साल था। साप्ताह दिन बाद उन दोनों भाई बहन की शादी थी। हम दोनों जुदा होने जा रहे थे। मन बेहद उदास था। सरिता भी कम बेचैन नहीं थी। यह वो दौर था जब लड़कियां घर से बहुत कम भागा करती थी। एक आध कुंए तालाब में कूद जरूर जाती थी परन्तु अधिकांश माता पिता के मर्जी के आगे मुंह नहीं खोलते और धोकर अंत: में चुप हो जाते थे।

एक दिन सुदामा दोपहर को मेरे घर आया। और मुझे अपने साथ ले गया । सरिता घर में अकेली थी। उसकी मां छोटे बेटे के साथ बाजार गई हुई थी। सरिता मुझे घर में ले गयी और अंदर से हुडकी बंद कर दी और खुद को खोल दी- "इस शरीर को सबसे पहले तुमने चुम्मा-चाटा है, इससे पहले कि इस पर किसी दूसरे का अधिकार हो जाए ..आओ हम दोनों आज एकाकार हो जाते हैं..!" और सरिता मुझसे लिपट कर चुम्बनों की झड़ी लगा दी थी। फिर कब और किस हालत में मैं उस घर से निकला था मुझे कुछ भी याद नहीं। बस इतना याद है कि तब तक सरिता की मां बाजार से लौट आई थी और पहरेदार सा सुदामा बाहर खड़ा था। फिर कई सालों तक हमारी मुलाकात नहीं हो सकी। और न सुदामा ही मुझे याद रहा। हां बीच बीच में खबरें आती रही। इसी बीच सुदामा के छोटे भाई बहन की भी शादी हो चुकी थी। खबर यह भी थी कि नौकरी और मुआवजे को लेकर काका के साथ शुरू हुआ झगड़ा और काफी बढ़ गया था। मुझे उसके कंस काका पर बड़ा गुस्सा आ रहा था "कमीना भतीजे का अंश भी गाय की मांस की तरह खा जाना चाहता है" फिर सुना बिना सूचना दिए एक बार फिर सुदामा कोलियरी गेट के सामने भूख हड़ताल पर बैठ गया था। मिला तो कुछ नहीं उल्टे कोलियरी काम में बाधा डालने के इल्ज़ाम में दो दिन थाने में बंद रहा।

उन दिनों सुदामा एक ऐसे मोड़ पर आकर खड़ा हो गया था, जो उसके जीवन का एक निर्णायक मोड़ साबित होने जा रहा था। इसके बाद से तो सुदामा अपनी जोरू-जमीन और जिंदगी का अकेला सिपाही था। क्योंकि इसके बाद जीवन के हर मोड़ पर उसे

कुचला और कूटा गया कभी अपनों ने तो कभी परायों ने। परन्तु वह कभी मरा नहीं- कभी हारा नहीं। अकेले वक्त और हालात के साथ वह लड़ता रहा। उसके जीवन में रात और दिन के मायने बदल गया था। दिन दौड़ने में गुजर जाता और रात लड़ने झगड़ने में बीत जाती। भाई उसका भवासीन का गुलाम बन चुका था। एक बार ससुराल जाता तो महीनों वहीं पडा रहता। अकेला हो जाने से आदमी की आमदनी पर भी असर आ जाता है। सुदामा दुकान पर बैठता तो बाहर के काम न हो पाता। बीमारी से लाचार मां दुकान से भी अलग हो चुकी थी। दमा और खांशी ने उसे एक कोने पर बैठने को मजबूर कर दिया था। जिस दिन सुदामा बाहर निकल जाता तो दुकान बंद कर देनी पड़ती हैं। ग्राहक लौट जाते और जो एक बार लौट गया वो दूबारा दुकान में आयेगा इसकी संभावना न के बराबर होती थी। तब उसने एक तरकीब निकाली जिस दिन सुदामा को कहीं बाहर जाना होता वो रात को ही गाजा-बालुशाही, निमकी और चना-घुघनी बना कर रख देने लगा। चूल्हा जला हुआ होता। सुदामा की पत्नी चाय बना कर ग्राहकों को पिलाने लगी। दुकान ठुकठुकाते संभल गया। मां की जगह सुनिता ने ले ली। पर जैसा आदमी सोचता है अक्सर वैसा होता कम ही है। बल्कि कभी कभी तो दांव उल्टा पड़ जाता है। जैसा कि आमरण-अनशन के दिनों से ही बलदेव गोसाईं का सुदामा के घर में आना जाना काफी बढ़ गया था। अब उसकी पुरानी स्कूटर जिस पर उसके तथाकथित विस्थापित नेता का झंडा बंधा हुआ होता था दिन भर सुदामा के घर के बाहर कबाड़ की तरह पडा रहता और बलदेव गोसाईं दिन भर आवारा कुत्तों की भांति दुकान में आने जाने वाले ग्राहकों को सुंघता रहता था। सुदामा को बलदेव कभी अच्छा नहीं लगा। लेकिन ग्राहक था । दुकान आने से मना भी नहीं कर सकता था।

महीना दिन का खाया-पिया का हिसाब महीना मिलते ही चुका देता था। अब तो खुद बलदेव दुकान में अधिक पैसा छोड़ जाता। जब सुदामा लौटाने लगता तो बलदेव गोसाईं बोल पड़ता- “अरे भाई रहने दो, खा पीकर एडजस्ट कर लेंगे। हम कोई बाहरी थोड़े न है..!” “रहने दीजिए न , काका खैरात थोड़े न दे रहे है, खाते पीते है उसी का तो देते है ..!”

सुनिता कह उठती। सुदामा पत्नी की बातों का मतलब नहीं निकाल पाता और चुप हो जाता था।

बहनों की शादी और भाई भवासीन का घर से दूर हो जाने से कहीं अधिक दुःख उसकी मां की बीमारी थी। मां उस घर की एक मजबूत इमारत की छत थी जो अब आहिस्ता आहिस्ता प्लास्टर की तरह झड़ने लगी थी। चाय-पकौडी की वह छोटी सी दुकान से उस परिवार की पहचान जुड़ी हुई थी और मां उस पहचान की केन्द्र बिन्दु थी। अब उस दुकान के केन्द्र में सुनिता आ गई थी। सुनिता दुकान के लिए किसी मधु कलस से कम न थी। कुछ दिन उतार चढ़ाव में बीते। फिर मधुमक्खीयों का आना शुरू हुआ तो कलस में मधु भरता चला गया तो भरता ही चला गया.. छलकता चला गया.. था!

सुदामा खुश था। कभी कभी अति उत्साह में कह उठता... "भगवान ऐसी पत्नी हर किसी को दें ...!" एक जिम्मेवार पत्नी की तरह सुनिता ने सुदामा का आधा भार उठा ली थी। दुकान चलाने का हुनर सुनिता बखूबी सीख गई थी। ग्राहकों को लुभाने में माहिर हो चुकी थी। सुदामा के लिए यह बड़ी बात थी -ऐसा सुदामा समझ रहा था। लेकिन सुदामा न तो पहले समझदार था न बाद में बन सका। जिस सुनिता को सुदामा अपना सब कुछ समझता था, दिलो जान से चाहता था, उसी पत्नी सुनीता का मादक बदन और कजरी नशीली आंखें, सुदामा के लिए अभिशाप बन गया। अब ऐसा देखा जा रहा था जिस दिन दुकान में सुदामा न होता उस दिन दुकान के सामने मनचलों की भीड़ लगी रहती। दुकान में बिक्री तो बढ़ी - साथ में सुनिता को लेकर बातें भी बढ़ने लगी थी। भीड़ और अकेली सुनिता! किस-किस को संभालती। घर में बेटा भी कभी मां मां करने लगता। तब बलदेव गोसाईं का वहां रोल बढ़ जाता। वह बच्चे के लिए कभी चॉकलेट तो कभी सोनपापड़ी लेते आता और बच्चे के साथ बाप बेटे का खेल खेलने लगता। सुनिता का इस पर कोई एतराज़ नहीं था!

बलदेव गोसाईं जवान नहीं था। परन्तु पैसा बहुत था उसके पास। सुनिता सुंदर थी

और जवान भी। उसकी कजरारी और नशीली आंखें किसी को भी पागल कर सकती थी। सुनिता को अपनी सुन्दरता का पता था और बलदेव को अपने पैसों की कीमत मालूम था। दोनों ने एक दूसरे के लिए रास्ता खुला छोड़ रखा था।

बलदेव के साथ सुनिता को भागे छः माह से ऊपर हो चुका था। और इन छः माह में सुदामा का चौदह नतीजा हो चुका था। सुनिता के भागने के तीसरे दिन उसकी मां ने फांसी लगा ली। नाते-रिश्तेदार सभी आये । लेकिन भोज काज के दूसरे दिन सभी चले भी गए। किसी ने कुछ कहा, किसी ने कुछ! सब अपनी कहते हुए निकल गये। पर किसी ने सुदामा की एक नहीं सुनी । लेलाहा-बोका जैसे शब्द उसके लिए छोड़ गए। "अब भगोड़ी का भोज खाने हमें मत बुलाना !" छोटी बहन ने कहा और निकल ली। अलबत्ता सरिता सात दिन रूक कर गयी। जाने के पहले बोली- "बुरा वक्त है, कोई कुछ कहे सुन लो, और नौकरी वाले कागज के पीछे लग जाओ, उसी नौकरी पर अब तुम्हारा जीवन मरण निर्भर करेगा...!" और सुदामा अकेला रह गया। घर में भी और संसार में भी! रहना नहीं देश विराना है! सुदामा जैसों के लिए ही शायद यह शब्द बना है। सुनिता का भागना सुदामा के लिए सदमे जैसा ही था कुछ दिनों तक सुदामा ने भयानक कष्ट और मानसिक संताप और उलझनों के साथ रातें गुजारी।

उन दिनों वह एक ऐसे दौर से गुजर रहा था जिस बिंदु पर पहुंच कर आदमी या तो आत्म हत्या कर लेता है या फिर पागल हो जाता है। लेकिन सुदामा में देखने को ऐसा कुछ भी नहीं मिला। हां शरीर सुख कर कांटा जरूर हो गया था । लोगों का मानना था कि अगर यही हालत रही तो वह किसी दिन भी लूढक सकता है। उधर उसका काका इस आश में जी रहा था कि सुदामा कब मरे और कब उसके बदले वह अपने बेटे को नौकरी लगा सके! काका सुदामा के मरने की आशा में जीने लगे था। सुदामा को छोड़ बलदेव के साथ सुनिता का भागना अचानक से नहीं हुआ था। पिछले डेढ़ दो साल में बलदेव ने न सिर्फ सुदामा के घर में जगह बनाई थी बल्कि सुनिता की देह में उतरने के लिए हजारों रूपए खर्च कर डाला था। होली- दिपावली और दुर्गा पूजा में मंहगी से मंहगी साड़ियां लाकर देना। बच्चे के मन पसंद खिलौने ला देना। घर की देहलीज लांघने से लेकर सुनिता

के शरीर तक पहुंचने का रास्ता ही तो था यह सब कुछ! यह सब कुछ देख कर भी सुदामा मुंह नहीं खोलता था तो यह सुदामा की बीमारी थी और अगर कभी मुंह से बोल निकलती भी तो प्रवचन लगता- "हर औरत के साथ उस घर की मान मर्यादा जुड़ी हुई होती है। बलदेव काका के साथ इस तरह स्कूटर में घुमना हाट बाजार करना हमें अच्छा नहीं लगता। यह सब बंद करो।" "इसमें बुरा क्या है? बाजार जाती हूं। दुकान का सारा सामान लाती हूं। है तेरा कोई सगे संबंधी जो यह सब कर दे। जो है भी वो तुम्हारे मरने की आश में जी रहा है - बात करता है।" "और उस कमीने झूठे नेता से भी मिलने जाती हो- वह कौन सा सगा है तुम्हारा...?" "एक बार मिली हूं ओ भी तेरे काम को लेकर...!"

उस दिन और बहुत कुछ कहा सुना गया "देखो, बाहर घूमना फिरना बंद करो। हमें बहुत बदनामी हो रही है- बात समझो ..!" "मुझे कुछ नहीं सुनना है। मैं वही करूंगी जो मुझे अच्छा लगेगा और जो मेरा दिल चाहेगा। ज़माना क्या कहता है - जमाना मेरी जरूरतें पूरी नहीं कर देगा" सुनिता ने सन्नाटे में बम सा धमाका कर दी थी "तुम एक बात सुन लो, मुझे ढेर सारे पैसे चाहिए और वो तुम्हारे पास नहीं है.. नहीं है ..!" "पैसे के लिए तुम कुछ भी करोगी ..?" सुदामा बहुत दिनों बाद चीखा था- "पैसा ही सबकुछ नहीं होता है, इज्ज़त प्रतिष्ठा भी कोई चीज होती है समझी तुम...!" "समझ गई....!" सुनिता मुंह फेर खड़ी हो गई थी। और सारा गुस्सा बेजान बर्तनों पर पटक-पटक कर उतारने लगी।

यह देख सुदामा पुनः चीखा था- "यह मेरा घर है किसी कबाड़ी वाले का नहीं! कलमुंही सा काम करना बंद करो...!" "तुमने मूकलमूंही कहा.." सुनिता चीख पड़ी थी "कुलटा स्त्री का काम करोगे तो लोग सीता नहीं कहेगा...!" "तुमने मुझे कुलटा कहा ...?" "हां कहा और फिर कहूंगा...!" सुदामा को लगा था यह झगड़ा भी रोज की तरह शांत हो जायेगा। उसे क्या पता था यह उसके जीवन का आखरी झगड़ा साबित होगा! सुनिता भी आश्चर्यचकित करने जैसी शांत और चुप हो गई थी । सुदामा को लगा, सब ठीक-ठाक हो गया है। तभी तीसरे दिन मौका मिलते ही सुनिता बलदेव से मिली और बोली "हमें कहीं ले चलो, अब इस घर में मेरा दम घुटने लगा है । अगर ऐसा नहीं किया तो मैं भी फांसी

लगा लूंगी...!" और वह जोर से बलदेव से लिपट गई थी। उस दिन सुदामा नौकरी वाले कागजात के सिलसिले में रांची गया हुआ था। ट्रेन छूट जाने के कारण घर लौट नहीं पाया था। सुबह घर लौटा तो उसकी दुनिया उजड़ चुकी थी। बेटा को साथ लिए रात को ही सुनिता बलदेव गोसाईं के साथ भाग गई थी। पहले सोचा थाने में मामला दर्ज करा दे फिर मन बदल लिया । शायद मन के किसी कोने में सुनिता को लेकर अब भी कुछ बचा हुआ था- लौट आने का भरोसा! परन्तु आज तक नहीं लौटी! हेडक्वार्टर में ही उस दिन कम खिच-खिच नहीं हुआ! क्या कुछ नहीं कहा था आफिस के बड़ा बाबू ने - "अरे भाई, क्यों बार बार मुझे परेशान करने चले आते हो ? देखो- मैंने कहा न तुम्हारा पेपर मेरी टेबल पर आते ही बड़ा साहब के पास भेज दूंगा-अब तुम जाओ" -मुफत में भेजा खाने चला आता है "आफिस से निकलते सुदामा के कानों से टकरायी थी यह बात और वह ठिठक गया था। मन किया पलट जाकर बड़ा बाबू के मुंह दो चांटे मार कर चल दे। परन्तु मजबूर आदमी मर तो सकता है-मार नहीं सकता! सुदामा जैसे लोगों के साथ यही लागू होता था।

तभी एक खबर उड़ी कि सुनिता बलदेव का सारा पैसा ले अबकी किसी ट्रक ड्राईवर के साथ भाग गई थी। होटल में ग्राहकों की आवाज से सुदामा की सोच का क्रम टूटा। देखा सामने कई लोग उसे विचित्र नजरों से देख रहे हैं। "सुदामा भाई ! दूसरी शादी कर लो, दिन के सपने देखने नहीं पड़ेंगे" किसी ने कहा "मैं तो कब से कह रहा हूं कि सुदामा शादी कर लो पर सुनता ही नहीं है!" यह शतीस बाबू था- "देखो, अब तुम्हारी उम्र ऐसी रही नहीं कि किसी जवान को संभाल सको। मेरी मानो तो कोई पुराना धुराना ले आओ। वो तुम्हारी अकडी देह को मुलायम कर देगी....!" "आप कुछ भी कह लो शतीस बाबू, परन्तु अब यह कुछ नहींकर सकता है" यह पत्रकार पी के ठाकुर था। उसी ने आगे कहा- "आप ही देखिए, बपौती जमीन चला गया। घर खदान में समा गया। जिसे बिहा कर लाया था वो औरत एक बूढ़े के साथ भाग गई । प्रबंधन ने इसे घर-जमीन से विस्थापित कर दिया और गोसाईं के बच्चे ने इसको औरत से विस्थापित कर दिया फिर भी यह किसी को कुछ कर सका- नहीं न! तो देखना आगे भी यह कुछ नहीं कर सकेगा।

अब तो इसको यह होटल भी छोड़ना पड़ेगा और यह कुछ नहीं कर सकेगा....!" जवाब में सुदामा ने उन तीनों के सामने चाय की ग्लास रखा और तेजी से अंदर गया और उतनी ही तेजी से बाहर निकल गया। फिर चाय की दूसरी केतली उठाई और "आप लोग चाय पियें मैं अभी आया" कहता हुआ चला गया था। रोज की तरह आज सुदामा ने "चाय सर!" नहीं कहा और अंदर से भी "आ जाओ" नहीं बोला गया। जैसे रोज का यह काम हो। दरवाजा ठेलता वह अंदर पहुंच गया। इस वक्त सुदामा की आंखों में केवल सुबह का नोटिस घूम रहा था। इसके साथ ही केतली पर उसकी पकड़ मजबूत होती चली गई थी। अंदर ज्यादा लोग नहीं थे। कुल तीन! पी ओ कलमाड़ी साहब, एक कोल ट्रांसपोर्टर तथा तीसरा एक छुटभैया टाइप का कोई नेता। कोयला ढुलाई काम में "टाइम एक्सटेंशन" के लिए ट्रांसपोर्टर हाथ जोड़ रहा था। और नेता उसी का पैरवीकार था।

मामला सीधे सीधे रिश्वत से जुड़ा हुआ था। अब तक सुदामा कलमाड़ी साहब के एक दम से करीब पहुंच कर खड़ा हो गया था। जैसे पहले चाय देने के वक्त खड़ा हो जाता था। इससे पहले कि कलमाड़ी साहब सुदामा से चाय देने को कहता, सुदामा ने कहना शुरू कर दिया "पी ओ साहब, आपने हमें बर्बाद कर दिया। मेरा मकान-दुकान सब खदान में समा गया। लेकिन मुझे न नौकरी मिली और न मुआवजा। बारह सालों से हम विस्थापन का जीवन जीने को विवश है। नौकरी पैसा न होने से आदमी किस तरह जीता है वो मुझसे बेहतर कोई नहीं जान सकता है !" सुदामा सरपट बोलता जा रहा था- "हम जमीन से विस्थापित हुए, घर से विस्थापित हुए, और इस वजह से हम अपनी औरत से भी विस्थापित हो गये। मेरा जीवन ही तबाह हो गया और यह सब कुछ आपकी वजह से हुई है ...!" कहने के साथ ही सुदामा ने केतली के मुंह का ढक्कन खोल दिया और तेजी से कलमाड़ी साहब के सर के ऊपर डाल दिया "पेट्रोल" की तीखी गन्ध कमरे में फैलती चली गई थी। किसी को कुछ समझ में आता-बचाव के उपाय सोचते, सुदामा ने जलती माचिस की तीली कलमाड़ी साहब पर फेंक। तेजी से वह बाहर निकला और बचा हुआ पेट्रोल खुद के ऊपर उंडेल लिया और खुद को भी माचिस मार लिया। आफिस कैम्पस में हड़कंप मच

गई। अंदर आग! बाहर आग! हर किसी की जुबान पर आग! चारों तरफ अफरातफरी का आलम। लोगों जोर से ज्यादा आग की लपटों का जोर था।

कुछ लोग अंदर की ओर लपके तो कुछ सुदामा की ओर दौड़े पर सब बेकार! खाली हाथ कोई क्या कर लेते? आफिस के बाहर का अग्निशमन यंत्र महीनों से बेकार पड़ा हुआ था। बचाव के दूसरा उपाय करते करते काफी देर हो चुकी थी। अंदर कलमाड़ी साहब काले पड़ गये थे और बाहर सुदामा आग की लपटों के साथ जैसे नाच रहा था-कहकहे लगा रहा था। जलता हुआ सुदामा अग्नि के साथ मानो ताण्डव नृत्य कर रहा था । लोग बोरी लेकर उसके तरफ दौड़ते तो वह दूर भागता! अपने पास आने से मना करता.....!

"डाक्टरों ने कलमाड़ी साहब को मृत घोषित कर दिया है और सुदामा अपने विस्थापन जीवन से आजाद हो गया है....!" पत्रकार पी के ठाकुर होस्पीटल के बाहर एक दूसरे पत्रकार को रिपोर्ट लिखवा रहा था। क्षेत्र में सुदामा का नाम सुनामी की तरह लिया जा रहा था !!

प्रेम की जात

श्यामल बिहारी

सुबह का समय था ।बाहर से मेरे कुछ दोस्त आये हुए थे। कुछ खाने पीने के बाद हम साथ बैठे चाय पी रहे थे । तभी हमने देखा दुखना घर आ गया है । वहीं से मैंने उसे आवाज दी- "अरे दुखना !

तब वह पानी पी रहा था।

"आप अरे कह कर बुलाते हैं उसे बुरा नहीं लगता है?"

एक दोस्त ने एतराज जताया।

"उसके जन्म के तीसरे दिन से ही हम सभी उसे इसी नाम से पुकारते-बुलाते है। कभी उसने बुरा नहीं माना।

"तो क्या जन्म के बाद ही आपने उसका यह नाम करण कर दिया था?"

"हां, उसके जन्म के तीसरे दिन ही यह नाम रखा गया था तब से वह इसी नाम से जाना जाता है !"

"कहां गया-आया नहीं ...?"

"आ जायेगा अभी वह कुछ खा रहा है !"

"अपने बेटे का इस तरह का नाम सुनकर उसकी मां को बुरा नहीं लगता वो आपत्ति नहीं करती है ?

"अब वह इस दुनिया में नहीं रही !"

"ओह- सॉ-सॉरी! हमें मालूम नहीं था "दूसरे ने अफसोस जाहिर किया था।

"कायल रथलाल घार छठियारी लागो ! "गांव की ठकुराइन दीदी सहसा आंगन में टपक पड़ी

"अबकी क्या हुआ दीदी ..? "मैंने जानना चाहा

"आर कि हतअ ! फेर बेटिये भेलअ तो !"लगा बेटी होने से
ठकुराइन दीदी भी खुश नहीं थी ।
"चार तो हो गई । लगता है हमारी भौजी, आधा दर्जन तक देखने के बाद ही बंद करने की सोचेगी । तुम लोग उसे कुछ समझाती नहीं । बेटियां आज बेटों से पीछे नहीं हैं -बहुत आगे बढ़ रही है!
"हमनी कि कहबअ बाबा ! ओकरा नाय पिराय है तो हमरा कि जाय...!" मुंह में आंचरा ठूंस वह हंसते बाहर निकल गई ।
उसके जाते रविदास टोला का रति रविदास पहुंच गया।
प्रणाम कर बगल कोने में खड़ा हो गया ।
"क्या बात है ? सुबह सुबह...!"
"फिर दोनों बचवन के स्कूल में नाम कयट गेलअ...!"
"काहे कटा...? पिछली बार हमने कहा था न कि समय पर महिना पैसा जमा कर देना। .! फिर...?"
"कुआं में काम करल हलिये -तीन महीना से पैसे नाय देल है कि करबअ ...!"
"कितना लगेगा ...?"
"दोनों के सतरह सौ...!"
"आगे से कटना नाय चाही फिर हमरे पास मत आना- लो जाओ..!"
पांव छू प्रणाम कर रति चला गया । यह देख एक दोस्त का माथा चकरा गया।
बोला -"इन लोगों का भी आपके पास आना होता है .?"

"इन लोगों से क्या मतलब है आपका ? अरे ये भी इंसान है। इसे भी समाज में पूरा पूरा जीने का हक है!"

"फिर भी ऐसे लोगों को अपने से दूर ही रखना चाहिए...!"

"मैं जाती भेद को नहीं मानता हूं आपको पता है...!" मैं थोड़ा गंभीर हो उठा था -"दुखना की मां मरी थी तब यही लोग सबसे पहले मेरे घर पहुंचे थे..। भाई ने बताया था।"

"फिर भी ...!"

"दुखना की मां को गुजरे कितने साल हो गए ?" तीसरे दोस्त ने दुखना की मां से फिर जोड दिया था।

"चार साल बीत चुका है, पांचवां साल चल रहा है...!"

तभी भाई ने आकर पूछा-" खसिया बेचेंगे? रमजान मियां बाहर खड़ा पूछ रहा है !"

"साढ़े आठ हजार देगा तो बोलो शाम को मिलेगा ? अभी बाहर से कुछ दोस्त लोग पधारे हैं। । "

भाई चला गया तो एक दोस्त बोला-

"आप दूसरी शादी क्यों नहीं कर लेते हैं? अभी आपकी उम्र ही क्या हुई है। चालीस में भी चौंतीस के लगते हैं- गबरू जवान है! खूब-सूरत है ! पचीस-तीस की कोई भी लड़की आप पर फिदा हो सकती है ! कहें तो मैं खोज शुरू कर दूं ! "

"बाबूजी, आप लोग नहा धोकर खाना खायेंगे या ऐसे ही, खाना बनकर रेडी है ?" पायल बेटी ने आकर पूछा ।

" मैं तो नहा-धो लिया हूं बेटे, और चाचा लोग भी नहाये से लग रहें हैं ....!"

"हां हां हम दोनों भी फ्रेस होकर ही घर से निकले हैं -बाकी खाना खा लेगें ...!"
तीसरे ने कहा
"ऐसा करो, थोड़ी देर बाद खाना लगा देना... ठीक है!"
"ठीक है बाबूजी...!"पायल चली गई तो दूसरे ने कहना शुरू किया-"मैं कह रहा था कि, दोनों बेटी बड़ी हो रही है। कलइसकी शादी बिहा हो जाएगी तो दोनों अपने अपने घर चली जाएंगी। बडा बेटा अभी बाहर पढ़ रहा है जाहिर है इंजीनियरिंग कर लेने के बाद वो भी घर में बैठा नहीं रहेगा। कहीं न कहीं जॉब लग ही जाएगी उसे। उस हालत में आप तो बिल्कुल अकेले हो जाएंगे। तब यह घर भांय भांय लगने लगेगी। भोजन पानी में भी परेशानी। आपकी शादी कर लेने में कोई बुराई नहीं है ..!"
"मैं इसकी बात से सहमत हूं। एक उम्र होती है। अभी सब कुछ आपके पक्ष में है। समय निकल जाने के बाद लोग बहुत तरह के सवाल उठाने लगते हैं ..!"
"वैसे दुखना की मां को हुआ क्या था...?"
"बाबूजी, आप लोग नहा धोकर खाना खायेंगे या ऐसे ही,
खाना बनकर रेड्डी है ?" पायल बेटी ने आकर पूछा।
" मैं तो नहा-धो लिया हूं बेटे, और चाचा लोग भी नहाये से लग रहें हैं ....!"
"हां हां हम दोनों भी फ्रेस होकर ही घर से निकले हैं -बाकी
खाना खा लेगें ...!" तीसरे ने कहा
"ऐसा करो, थोड़ी देर बाद खाना लगा देना... ठीक है!"
"ठीक है बाबूजी...! "पायल चली गई तो दूसरे ने कहना शुरू किया-"मैं कह रहा था कि, दोनों बेटी बड़ी हो रही है। कल इसकी शादी बिहा हो जाएगी तो दोनों

अपने अपने घर चली जाएंगी। बडा बेटा अभी बाहर पढ़ रहा है जाहिर है इंजीनियरिंग कर लेने के बाद वो भी घर में बैठा नहीं रहेगा। कहीं न कहीं जॉब लग ही जाएगी उसे। उस हालत में आप तो बिल्कुल अकेले हो जाएंगे। तब यह घर भांय भांय लगने लगेगी। भोजन पानी में भी परेशानी। आपकी शादी कर लेने में कोई बुराई नहीं है ..!"

"मैं इसकी बात से सहमत हूं। एक उम्र होती है। अभी सब कुछ आपके पक्ष में है। समय निकल जाने के बाद लोग बहुत तरह के सवाल उठाने लगते हैं ..!"

"वैसे दुखना की मां को हुआ क्या था...?"

श्यामल बिहारी महतो

ग्राम- मुंगो, पोस्ट तुरीयो, बोकारो, झारखंड, पिन कोड नं 829132, फोन नं 6204131994

एक परिचय

प्रकाशन बहेलियों के बीच कहानी संग्रह भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित तथा अन्य दो कहानी संग्रह बिजनेस और लतखोर प्रकाशित और कोयला का फूल उपन्यास प्रकाशित और पांचवीं पुस्तक उबटन प्रेस में।

संप्रति- तारमी कोलियरी सीसीएल कार्मिक विभाग में वरीय लिपिक स्पेशल ग्रेड पद पर कार्यरत और मजदूर यूनियन में सक्रिय

अनुवाद

सुश्री फ़ोर्ब्स की सुखद गर्मियाँ

(लातिन अमेरिकी कहानी का अप्रकाशित हिंदी अनुवाद)

मूल लेखक : गैब्रिएल गार्सिया मार्खेज़

अनुवाद : सुशांत सुप्रिय

जब दोपहर में हम मकान पर वापस लौटे तो हमने एक विशाल समुद्री साँप को दरवाज़े के चौखटे पर गले से कील से जड़ा हुआ पाया । वह साँप काला और चमकीला था । अपनी अब भी चमकदार आँखों और खुले जबड़े में मौजूद आरे जैसे दाँतों की वजह से यह साँप किसी कंजर के अभिशाप की तरह लग रहा था । उस समय मैं लगभग नौ वर्ष का था और सन्निपात जैसे हालात में देखे गए उस दृश्य के कारण मैं इतना ज़्यादा डर गया कि कुछ देर के लिए मेरी घिग्घी बँध गई । लेकिन मुझसे दो वर्ष छोटा मेरा भाई ऑक्सीजन टैंक , नक़ाब और मीनपक्ष फेंक कर डर के मारे चिल्लाता हुआ वहाँ से भाग खड़ा हुआ । पत्थर की सीढ़ियों पर खड़ी सुश्री फ़ोर्ब्स ने उस आवाज़ को सुना । ये पथरीली सीढ़ियाँ चट्टानों के साथ-साथ चलती हुई गोदी से घर तक आती थीं । ज़र्द चेहरा लिए वे दौड़ती और हाँफती हुई हमारे पास आईं । लेकिन जैसे ही उन्हें दरवाज़े पर कील से जड़ा वह विशाल साँप दिखा , वे हमारे भयभीत होने का कारण समझ गईं । वे हमेशा कहती थीं कि जब दो बच्चे इकट्ठे होते हैं तो एक के अकेले किए गए कारनामे के लिए वे दोनों ही ज़िम्मेदार होते हैं । इसलिए मेरे भाई के चीखने-चिल्लाने पर उन्होंने हम दोनों को ज़ोर से डाँटा और हमारे आत्म-नियंत्रण में कमी के कारण वे हमें देर तक फटकार लगाती रहीं । वे जर्मन भाषा में हमें डाँट रही थीं , न कि अंग्रेज़ी में , जिसमें हमें पढ़ाने के अनुबंध पर उन्होंने हस्ताक्षर किए थे । शायद ऐसा इसलिए था क्योंकि वे भी उस विशाल साँप को देखकर डर गई थीं , लेकिन वे इस बात को स्वीकार नहीं करना चाहती थीं । पर जैसे ही वे थोड़ा सहज हुईं , वे वापस अपनी कठोर अंग्रेज़ी और शैक्षणिक सनक पर लौट आईं।

“इसे ‘ मुरेएना हेलेना ‘ कहते हैं , “ उन्होंने हमें बताया। “ यह जानवर प्राचीन ग्रीक-वासियों के लिए पवित्र था।”

तभी अचानक स्थानीय लड़का ओरेस्ते एगेव पौधों के पीछे नज़र आया । वह हमें गहरे पानी में तैरना सिखाता था । अपने माथे पर उसने गोताखोरी वाला नक़ाब पहन रखा था । साथ ही उसने तैरने की एक छोटी पोशाक पहनी हुई थी। उसकी कमरबंद में विभिन्न आकारों के छह चाकू बँधे हुए थे। दरअसल पानी के भीतर अपने शिकार से भिड़ते समय वह उन पर बेहद क़रीब से वार करता था।

वह लगभग बीस वर्ष का था और वह ज़मीन पर समय बिताने की बजाए अपना अधिकांश समय पानी के भीतर समुद्र-तल पर बिताता था। वह अपनी देह पर हमेशा इंजन का तेल मल लेता था जिसके कारण वह पानी के भीतर किसी समुद्री जीव जैसा दिखता था। जब सुश्री फ़ोर्ब्स ने उसे पहली बार देखा तो उन्होंने मेरे माता-पिता को बताया कि उससे सुंदर इंसान की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। लेकिन उसकी सुंदरता भी उसे सुश्री फ़ोर्ब्स की सख़्ती से नहीं बचा पाई । उसे भी इतालवी भाषा में उनकी झिड़की सहनी पड़ी क्योंकि उसने मोरे ईल को दरवाज़े पर टाँग दिया था । उसका एकमात्र उद्देश्य यही था कि हम बच्चे उस विशाल सर्पाकार जीव को देख कर डर जाएँ । तब सुश्री फ़ोर्ब्स ने उसे उस जीव को वहाँ से उतार कर हटा देने के लिए कहा। उनकी आवाज़ में उस पौराणिक जीव के लिए सम्मान का भाव था । फिर उन्होंने हमें भोजन करने के लिए कपड़े बदल कर आने का आदेश दिया।

हमने बिना देर किए ऐसा ही किया । हम कोशिश करते रहे कि हमसे कोई ग़लती न हो । सुश्री फ़ोर्ब्स के अधीन दो हफ़्ते बिताने के बाद हम समझ गए थे कि जीने से अधिक मुश्किल और कुछ नहीं था । गुसलखाने की मद्धिम रोशनी में नहाते समय मैं जान गया कि मेरा छोटा भाई अब भी उसी मोरे ईल के बारे में सोच रहा था । " उसकी आँखें लोगों की तरह थीं , " उसने कहा । मैं उससे सहमत था लेकिन मैंने इसके ठीक विपरीत बात कही और कपड़े धोने तक मैं बातचीत का विषय बदलने में कामयाब हो गया । लेकिन जब मैं स्नान करने के बाद गुसलखाने से बाहर आया तो छोटे भाई ने मुझे रुक कर साथ चलने के लिए कहा ।

" अभी तो दिन का समय है।" मैं बोला।

मैंने पर्दे हटा दिए । वह अगस्त के बीच का महीना था और खिड़की में से आप द्वीप के दूसरी ओर तक का समूचा पथरीला मैदान देख सकते थे । सूरज जैसे बीच आकाश में रुका हुआ था।

" इसलिए नहीं । दरअसल मैं डर जाने से डर रहा हूँ । " छोटा भाई बोला ।

लेकिन जब हम भोजन की मेज़ तक आए तो वह शांत हो चुका था । उसने इतने ध्यान से सब कुछ किया कि सुश्री फ़ोर्ब्स ने विशेष रूप से उसकी तारीफ़ की और उसे हफ़्ते के ' अच्छे व्यवहार ' वाली तालिका में दो अंक प्राप्त हुए। दूसरी ओर उसी तालिका से मेरे पाँच में से दो अंक कट गए । ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि मुझे देर हो रही थी और मैं बिल्कुल अंत में भाग कर भोजन-कक्ष में पहुँचा , जिसके कारण मेरी साँस चढ़ी हुई थी । तालिका में अपने नाम के नीचे पचास अंक जुड़ने पर हमें दुगनी मिठाई मिलती थी। लेकिन हम दोनों भाइयों में से किसी के भी पंद्रह से ज़्यादा अंक नहीं जुड़े थे।

यह वाक़ई अफ़सोस की बात थी क्योंकि सुश्री फ़ोर्ब्स के द्वारा बनाई गई मिठाइयों से ज़्यादा स्वादिष्ट चीज़ हमें फिर कभी खाने के लिए नहीं मिली।

भोजन शुरू करने से पहले हम सब खड़े होकर प्रार्थना करते थे। सुश्री फ़ोर्ब्स कैथोलिक धर्म को मानने वाली महिला नहीं थीं लेकिन उनके करार में यह लिखा हुआ था कि उन्हें दिन में छह बार प्रार्थना करनी होगी। उन्होंने करार की शर्त पूरी करने के लिए हमारी प्रार्थना सीख ली थी। उसके बाद हम तीनों बैठ जाते और हम अपनी साँस रोके रहते जबकि सुश्री फ़ोर्ब्स हमारे पूरे आचरण पर विचार करतीं। जब उन्हें सब कुछ बिल्कुल सही लगता, तभी वे घंटी बजाती थीं। तब रसोइया फ़ुल्विया फ़लैमिनिया गर्मियों का घृणास्पद सेवइयों का शोरबा ले कर कक्ष में आती।

शुरू में जब हम अपने माता-पिता के साथ होते थे, तब भोजन करना किसी त्योहार की तरह होता था। फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया मेज़ के चारों ओर खिलखिलाते हुए हमें खाना परोस रही होती। वहाँ फैली अव्यवस्था से हम ख़ुश हो जाते। फिर वह हमारे साथ बैठ कर सबकी थाली में से कुछ-न-कुछ ले कर खाती। लेकिन जब से सुश्री फ़ोर्ब्स ने हमारी क़िस्मत की ज़िम्मेदारी सँभाल ली थी, वह एक मनहूस चुप्पी के साथ खाना परोसती थी जहाँ हमें केवल परात में शोरबे के उबलने की आवाज़ आती थी। हम अपनी रीढ़ की हड्डियाँ कुर्सियों पर टिकाए, दस बार दाईं और दस बार बाईं ओर से खाना चबाते रहते थे। हमारी आँखें उस सख़्त, निरुत्साही, ठंडी महिला पर टिकी रहतीं जो हमें शिष्टाचार के रटे हुए नियम सुनाती रहती। यह सब लगभग रविवार की सामूहिक प्रार्थना की तरह होता लेकिन यहाँ प्रार्थना-गीत की सान्त्वना नहीं होती।

जिस दिन हमें अपने दरवाज़े से टँगी मोरे ईल मिली, सुश्री फ़ोर्ब्स ने हमारे देशभक्तिपूर्ण दायित्वों के बारे में हमसे बात की। शोरबे के बाद फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया हमारे लिए ख़ुशबूदार, गर्म कबाब के कतले ले कर आई। वह जैसे हमारी शिक्षिका की आवाज़ से विरल बना दी गई हवा पर तैर रही थी। मुझे ज़मीन पर या हवा में किसी और खाद्य-पदार्थ की बजाए मछली ज़्यादा पसंद है और गुआकैमायाल के हमारे घर की याद आते ही मुझे चैन आ गया। लेकिन मेरे भाई ने चखे बिना ही उस व्यंजन को खाने से इंकार कर दिया।

"मुझे यह पसंद नहीं" उसने कहा।
सुश्री फ़ोर्ब्स ने अपना प्रवचन बीच में रोक दिया।

"तुम यह कैसे कह सकते हो ? तुमने अभी इसे चखा भी नहीं।"

उन्होंने आँखों के इशारे से रसोइये को धमकी दी लेकिन तब तक देर हो चुकी थी।

"मोरे विश्व की सर्वश्रेष्ठ मछली होती है, मेरे बच्चे। "फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया ने कहा।" चख कर देखो तो सही।"

सुश्री फ़ोर्ब्स शांत बनी रहीं। उन्होंने अपने बेदर्द तरीक़े से हमें बताया कि पुरातन काल में मोरे ईल राजाओं द्वारा खाए जाने वाला एक स्वादिष्ट व्यंजन था। यहाँ तक कि योद्धा भी इसके पित्त को खाने के लिए आपस में लड़ते थे। माना जाता था कि इसे खाने से योद्धाओं में अलौकिक साहस का संचार होता था। फिर उन्होंने थोड़े समय में अपनी पुरानी बात को दोहराया कि अच्छा स्वाद महसूस करना स्वाभाविक योग्यता नहीं है । इसे किसी ख़ास उम्र में सिखाया नहीं जाता, बल्कि यह तो बचपन से आरोपित किया जाता है। इसलिए हमारे पास उसे नहीं खाने का कोई वैध कारण नहीं। मैंने पहले भी मोरे ईल का स्वाद चखा हुआ था। तब मैं यह भी नहीं जानता था कि वह क्या है । इसलिए मैं इस विरोधाभास को हमेशा के लिए याद रख सका: यह चिकना और फीके स्वाद वाला था, लेकिन दरवाज़े के चौखटे पर टाँग दिए गए साँप की छवि मेरी भूख से ज़्यादा विवश करने वाली थी। मेरे भाई ने पहला कौर खाने का भरपूर प्रयास किया पर वह इसे सहन नहीं कर सका । उसने उल्टी कर दी।

" तुम गुसलखाने में जाओगे और खुद को साफ़ करके दोबारा यहाँ लौट कर खाना खाओगे, "सुश्री फ़ोर्ब्स ने शांत बने रहते हुए कहा।

मैंने भाई के लिए तीव्र व्यथा महसूस की क्योंकि मैं जानता था कि उसे पूरे मकान को पार करके उस प्रारम्भिक अँधेरे में गुसलखाने में अकेले रहना कितना मुश्किल लगता था। लेकिन वह जल्दी ही एक साफ़-सुथरी क़मीज़ पहन कर वापस लौट आया । उसका रंग पीला पड़ गया था और वह हल्का-सा काँप रहा था । उसने सफ़ाई से सम्बंधित सुश्री फ़ोर्ब्स की कठोर निगाहों को ठीक से बर्दाश्त किया । तब सुश्री फ़ोर्ब्स ने मोरे ईल का एक टुकड़ा काटा और हमें खाना जारी रखने के लिए कहा। मैंने किसी तरह दूसरा टुकड़ा मुँह में डाला लेकिन मेरे भाई ने छुरी-काँटे को हाथ भी नहीं लगाया।

" मैं इसे नहीं खाऊँगा । "उसने कहा।

उसकी दृढ़ता इतनी स्पष्ट थी कि सुश्री फ़ोर्ब्स अपनी बात से पीछे हट गईं।

"ठीक है, "उन्होंने कहा, "लेकिन आज तुम्हें कोई मिठाई नहीं मिलेगी।"

मेरे भाई को मिली राहत ने मुझ में भी साहस भर दिया। खाना ख़त्म करने पर छुरी-काँटे को प्लेट में जैसे रखना सुश्री फ़ोर्ब्स ने हमें सिखाया था , मैंने ठीक वैसे ही किया और बोला, "मैं भी मिठाई नहीं खाऊँगा।"

"और तुम दोनों टेलीविजन नहीं देखोगे। "उन्होंने कहा।

"और हम दोनों टेलीविजन नहीं देखेंगे। "मैंने कहा।

सुश्री फ़ोर्ब्स ने अपना रुमाल मेज़ पर रखा और हम तीनों प्रार्थना करने के लिए खड़े हो गए । फिर उन्होंने इस चेतावनी के साथ हमें हमारे शयन-कक्ष में भेज दिया कि उनके भोजन समाप्त कर लेने तक हमें सो जाना है । हमारे सभी 'अच्छे व्यवहार' वाले अंक रद्द कर दिए गए । जब हम बीस अंक और अर्जित कर लेते , तभी हमें उनकी बनाई क्रीम-केक, वनीला की सुगंधित कचौरियाँ, और आलूबुख़ारे की उत्कृष्ट पेस्ट्री फिर से खाने के लिए मिलनी थी।

जल्द ही या बाद में हमें अवकाश तो मिलना ही था। पूरे साल हम सिसिली के दक्षिणी छोर पर स्थित पैंटेलेरिया द्वीप पर आज़ादी की गर्मियों की प्रतीक्षा करते रहे। पहले कुछ महीने, जब हमारे माता -पिता यहाँ मौजूद थे तब हमें ख़ूब मज़ा आया था। मैं अब भी वे दिन किसी सपने की तरह याद करता हूँ: ज्वालामुखी के पत्थरों से भरा धूप में तपता हुआ मैदान, अनंत समुद्र, ईंटों तक चूने से पुता मकान। जब रात में हवा नहीं चलती तब आप खिड़कियों में से अफ़्रीका के प्रकाश-स्तम्भों की चमकदार रोशनी की किरणों को देख सकते थे। अपने पिता के साथ द्वीप के चारों ओर के समुद्र के सुप्त तल पर खोज-बीन करते हुए हमने पीले रंग के टॉरपीडो की एक क़तार ढूँढ़ निकाली थी । वे पिछले युद्ध के समय से समुद्र-तल में आधे धँसे पड़े हुए थे। हम एक मीटर ऊँचे ग्रीस के एक दोहत्थे कलश को वहाँ से ढूँढ़ कर ऊपर ले आए थे। वहाँ गहराई में कुछ फूलमालाएँ थीं और अति-प्राचीन शराब की बोतलों के तल में थोड़ी ज़हरीली शराब भी मौजूद थी । वहाँ हमने गर्म पानी में स्नान भी किया था और वहाँ उबलते हुए पानी में इतनी घनी भाफ़ थी गोया आप उस पर चल सकते थे।

लेकिन हमारे लिए सबसे ज़्यादा चौंधिया देने वाला रहस्योद्घाटन तो स्वयं फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया थी । वह किसी हँसमुख धर्माध्यक्ष की तरह लगती थी और जब वह चलती थी तो बहुत-सी उनींदी बिल्लियाँ उसके आगे-पीछे घूमती रहती थीं।

लेकिन उसका कहना था कि वह बिल्लियों के प्रति किसी स्नेह की वजह से उन्हें सहन नहीं करती थी बल्कि ख़ूँख़ार चूहों द्वारा काट खाए जाने से खुद को बचाने के लिए ऐसा करती थी। हमारे माता-पिता रात में टेलीविजन पर वयस्कों के लिए दिखाए जाने वाले कार्यक्रम देखने में व्यस्त रहते थे। उस समय फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया हमें हमारे घर से सौ मीटर से भी कम दूरी पर स्थित अपने घर ले जाती थी। तब वह हमें टूनिस से बह कर आने वाली हवाओं के साथ सुनाई देने वाली दूरस्थ बड़बड़ाहट, गीतों और रुदन की आवाज़ों में फ़र्क़ करना सिखाती थी।

उसका पति उससे उम्र में बहुत छोटा था। वह गर्मियों में द्वीप के दूसरी ओर स्थित पर्यटकों से भरे होटलों में काम करता था और रात में केवल सोने के लिए घर आता था। ओरेस्टे अपने माता-पिता के साथ वहाँ से थोड़ी दूर ही रहता था। रात में वह हमेशा मछलियों की मालाएँ और समुद्री झींगों से भरी टोकरियाँ लिए हुए दिखाई देता था, जिन्हें वह रसोई में टाँग देता था। फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया का पति उन्हें अगले दिन होटलों में बेच देता था। फिर ओरेस्टे अपने माथे पर गोताखोरी वाली पथ-प्रदर्शक बत्तियाँ बाँध कर हमें खेत के ख़रगोशों जितने बड़े चूहे पकड़ने के लिए ले जाता था। ये चूहे रसोई से निकलने वाली बची-ख़ुशी जूठन की ताक में वहाँ घूमते रहते थे। कभी-कभी हम अपने माता-पिता के सो जाने के बाद वापस घर आते थे। तब बची-खुची जूठन के लिए आँगन में चूहे इतना शोरगुल मचा रहे होते थे कि हमारा सोना दूभर हो जाता था। लेकिन यह मुसीबत भी हमारी सुखद गर्मियों का एक जादुई अंश थी।

एक जर्मन शिक्षिका की सेवा लेने का निर्णय केवल मेरे पिता ही कर सकते थे। वे एक कैरेबियाई देश के लेखक थे जिनमें योग्यता कम थी, परिकल्पना अधिक। उनकी आँखें यूरोप के प्रताप की राख से चौंधियाई हुई थीं। पिता अपनी किताबों और वास्तविक जीवन में भी अपनी उत्पत्ति के प्रति क्षमायाचना का भाव रखते थे। उन्होंने इस मोह-माया के आगे घुटने टेक दिए थे और वे चाहते थे कि उनके बच्चों में उनके अपने अतीत का लेशमात्र भी अंश न रहे। मेरी माँ अब भी उतनी ही विनीत थीं जितना वे अल्टा गुआज़िरा में शिक्षिका के रूप में काम करने वाले दिनों में रही थीं। उन्होंने कभी सोचा भी नहीं था कि उनके पति को कोई ऐसा विचार भी सूझ सकता है जो शुभ और समयोचित से कम हो। इसलिए वे दोनों अपने हृदय से नहीं पूछ सकते थे कि हम बच्चों का जीवन डोर्टमंड की एक हवलदार महिला के अधीन कैसा हो जाएगा। एक ऐसी महिला जो यूरोपीय समाज की सबसे प्राचीन और बासी आदतें ज़बर्दस्ती हमें सिखाने पर तुली हुई थी। किंतु दूसरी ओर वे तथा चालीस अन्य फ़ैशनप्रिय लेखक एजियन समुद्र में स्थित द्वीपों पर पाँच हफ़्तों के सांस्कृतिक मिलन का मज़ा ले रहे थे।

सुश्री फ़ोर्ब्स पैलेरमो से आने वाली नियत नाव से जुलाई के अंतिम शनिवार के दिन आईं। जैसे ही हमने उन्हें देखा, हम समझ गए कि हमारे मौज-मस्ती के दिन अब ख़त्म हो गए। वे गर्मी के मौसम में आईं और उन्होंने सैनिकों वाले जूते पहने हुए थे। उनकी कोट के गरेबान की 'लौट' का कुछ अंश ढँका हुआ था और टोपी के नीचे उनके बाल पुरुषों जैसे कटे हुए थे। उनमें से बंदर के पेशाब की गँध आ रही थी।

"सभी यूरोपीय लोगों से गर्मियों में ऐसी ही गंध आती है," हमारे पिता ने हमें बताया।

"यह सभ्यता की गंध है।" किंतु अपनी सैनिक वेश-भूषा के बावजूद सुश्री फ़ोर्ब्स में एक बेचारगी का भाव था। वे हमारे भीतर थोड़ी करुणा जगा सकती थीं यदि हम थोड़ी बड़ी उम्र के होते या वे थोड़े नरम स्वभाव की होतीं।

हमारी तो दुनिया ही बदल गई। समुद्र में हमारी कल्पना की उड़ान के छह घंटे अब एक कष्टदायक घंटे के बार-बार दोहराव जैसे हो कर रह गए। जब हम अपने माता-पिता के साथ थे, तब हमें ओरेस्टे के साथ तैरने के लिए पूरा समय मिलता था। हम उसकी हिम्मत और कला की दाद देते थे। वह खून और स्याही से गंदले हुए पानी में ऑक्टोपस के अपने पर्यावरण में बिना किसी अन्य हथियार के, केवल एक चाकू लेकर उनसे भिड़ जाता था। वह अब भी हमेशा की तरह अपनी इंजन वाली नाव ले कर ग्यारह बजे हमारे पास पहुँच जाता था। किंतु सुश्री फ़ोर्ब्स उसे उतना समय ही हमारे साथ बिताने देती थीं जितना हमें गहरे पानी में गोताखोरी सिखाने के लिए पर्याप्त होता था। उन्होंने हमें रात में फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया के घर जाने से मना कर दिया था क्योंकि उन्हें नौकरों के साथ अधिक घनिष्ठता पसंद नहीं थी। जो घंटे हम पहले चूहों का शिकार करते हुए बिताया करते थे, अब हमें वे घंटे शेक्सपियर के नाटकों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करते हुए बिताने पड़ते थे। हमें आँगनों से आम चुराने और गुआकैमायाल की बेहद गर्म सड़कों पर कुत्तों को पत्थर से मारने की आदत थी। किंतु अब कठोर अनुशासन में हम जो राजकुमारों जैसा जीवन जी रहे थे, वह हमारे लिए किसी यातना से कम नहीं था।

लेकिन हमें जल्दी ही यह पता चल गया कि सुश्री फ़ोर्ब्स जितनी सख़्ती हमारे साथ बरतती थीं, उतनी सख़्त वे खुद के साथ क़तई नहीं थीं। यह उनके प्रभुत्व में पहली दरार थी। शुरू में वे सैनिक वेश-भूषा में समुद्र-तट पर एक रंगबिरंगी छतरी के नीचे लेटी रहती थीं। वे वहाँ शिलर के गाथा-गीत पढ़ती रहती थीं, जबकि उस समय ओरेस्टे हमें गोताखोरी सिखाया करता था। और फिर कई घंटों तक वे हमें सही व्यवहार के बारे में सैद्धांतिक व्याख्यान देती थीं जब तक कि दोपहर के भोजन का समय नहीं हो जाता था।

एक दिन उन्होंने ओरेस्टे से कहा कि वह उन्हें अपनी नाव पर होटल की उन दुकानों तक ले चले जहाँ पर्यटक आते थे। वे अपने साथ स्नान करते समय पहनने वाला छोटा-सा काला, चमकीला वस्त्र ले कर लौटीं। किंतु उन्होंने कभी पानी में प्रवेश नहीं किया। हम तैर रहे होते जबकि वे समुद्र-तट पर धूप-स्नान का मज़ा लेतीं। वे अपने बदन से निकलने वाले पसीने को एक तौलिये से पोंछ देतीं पर स्नान करने के लिए नहीं जातीं। तीन दिनों के बाद वे एक उबले हुए समुद्री झींगे जैसी लगने लगीं और उनकी सभ्यता की गंध में साँस लेना हमारे लिए असहनीय हो गया था।

रात में वे अपनी भावनाओं को खुली छूट दे देती थीं। जब से वे यहाँ आई थीं, तभी से हमें रात में मकान के कमरों में किसी के चलने की आवाज़ सुनाई देती थी। जैसे कोई अँधेरे कमरों में रास्ता टटोल रहा हो। मेरा छोटा भाई इस विचार से डर जाता था कि ज़रूर समुद्र में डूब गए किसी व्यक्ति की रूह मकान में भटक रही है। हमने इनकी कहानियाँ फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया से सुनी थीं। लेकिन जल्दी ही हमने पाया कि वह दरअसल सुश्री फ़ोर्ब्स थीं जो रात में एक अकेली महिला का जीवन जीती थीं। एक ऐसी महिला जिसके व्यवहार की वे दिन में स्वयं निंदा करेंगी। एक दिन सुबह पौ फटने के समय हमने जल्दी उठ कर उन्हें रसोई में आश्चर्यचकित कर दिया। दरअसल वे वहाँ किसी विद्यालय की बालिका जैसी रात्रिकालीन पोशाक में भोजन के अंत में परोसी जाने वाली अपनी शानदार मिठाइयाँ बना रही थीं। उनके चेहरे और पूरी देह पर आटा लगा हुआ था और वे इतनी बेफ़िक्री से एक गिलास में पुर्तगाली शराब पी रही थीं कि यह देखकर वास्तविक सुश्री फ़ोर्ब्स को आघात पहुँचता।

तब तक हम यह जान गए थे कि जब हम सोने के लिए बिस्तर पर चले जाते थे तो वे अपने शयन-कक्ष में नहीं जाती थीं बल्कि गोपनीय तरीक़े से अकेले में समुद्र में तैरने चली जाती थीं। कभी-कभी वे बैठक में देर तक जगी रह कर टेलीविजन पर आवाज़ बंद करके ऐसी फ़िल्में देखती थीं जिन्हें देखना नाबालिगों के लिए प्रतिबंधित था। अन्य रातों में वे पूरा केक खा जाती थीं, यहाँ तक कि बोतल की उस विशिष्ट शराब को भी पी जाती थीं जिसे पिता ने बड़ी लगन से ख़ास मौक़ों के लिए बचा कर रखा हुआ था।

सादगी और आत्म-संयम अपनाने की अपनी सीख के विरुद्ध जा कर सुश्री फ़ोर्ब्स एक अनियंत्रित सनक के तहत सब कुछ डकार जाया करती थीं। बाद में हमने उन्हें अपने कमरे में खुद से बातें करते हुए सुना। हमने उन्हें जर्मन भाषा में लय में 'डाइ युंगफ़्राउ वॉन ओरलीन्स' के पूरे उद्धरणों का पाठ करते हुए सुना। हमने उन्हें गीत गाते हुए और अपने बिस्तर पर सुबह तक सिसकते हुए सुना। फिर वह सुबह के नाश्ते के लिए उपस्थित हो जातीं। उनकी आँखें आँसुओं की वजह से सूजी हुई होतीं। वे पहले से अधिक उदास लगतीं।

मेरा भाई और मैं तब जितने दुखी थे , उससे अधिक दुखी कभी नहीं हुए , लेकिन मैं उन्हें अंत तक सहने के लिए तैयार था। दरअसल मैं जानता था कि हम कुछ भी करें, अंत में हमें उनकी बात माननी ही पड़ेगी। लेकिन मेरा छोटा भाई अपने व्यक्तित्व की सम्पूर्ण ऊर्जा के साथ उनका विरोध करता था । इसलिए प्रसन्नता की वे गर्मियाँ हमारे लिए नारकीय बन गईं। मोरे ईल की घटना तो ताबूत में अंतिम कील साबित हुई। उसी रात जब हम अपने बिस्तर पर लेट कर उस सुप्त मकान में सुश्री फ़ोर्ब्स के लगातार कमरों में आने-जाने की आवाज़ें सुन रहे थे , मेरे भाई ने अपने भीतर भरी सारी घृणा निकाल कर बाहर रख दी।

"मैं उन्हें जान से मार दूँगा।" उसने कहा।

मैं हैरान हो गया । मेरी हैरानी छोटे भाई के इस निर्णय को ले कर नहीं थी। मैं इसलिए हैरान हो गया क्योंकि रात के भोजन के समय से मैं भी यही सोच रहा था। किंतु मैंने भाई को ऐसा करने से मना किया।

"वे तुम्हारा सिर काट डालेंगे।," मैंने उससे कहा।
"सिसिली में उनके पास कर्तन-यंत्र नहीं है," उसने कहा। "इसके अलावा उन्हें यह पता ही नहीं चलेगा कि किसने उन्हें मारा।"

मैंने समुद्र-तल से निकाल कर बाहर लाए गए उस दोहत्थे कलश के बारे में सोचा जिसके तल पर घातक शराब अब भी मौजूद थी। मेरे पिता ने इस कलश को सम्भाल कर रखा था क्योंकि वे इसमें मौजूद शराब का विश्लेषण करके ज़हर की प्रकृति के बारे में जानना चाहते थे। उनके मुताबिक़ केवल समय बीतने की वजह से यह शराब ज़हरीली हो गई हो, ऐसा नहीं था। सुश्री फ़ोर्ब्स को वह शराब पिला देना बेहद आसान होगा और कोई सोच भी नहीं सकेगा कि वह कोई दुर्घटना या आत्म-हत्या नहीं थी। सुबह पौ फटने के समय हमने सुश्री फ़ोर्ब्स के थक कर बिस्तर पर लुढ़कने की आवाज़ सुनी। सारी रात जगे रहने के कारण वे थकान से चूर हो चुकी थीं। तब हमने कलश की ज़हरीली शराब को पिता की विशिष्ट शराब की बोतल में भर दिया। जहाँ तक हमने सुना था, उतनी ज़हरीली शराब एक घोड़े को मारने के लिए पर्याप्त थी।

हमने ठीक नौ बजे रसोई में सुबह का नाश्ता किया । सुश्री फ़ोर्ब्स ने स्वयं नाश्ते का वह सामान ला कर हमें खाने के लिए दिया जिसे फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया सुबह-सुबह बना कर रसोई में रख गई थी।

शराब की बोतल में हमारे द्वारा शराब बदल देने के दो दिन बाद जब हम नाश्ता कर रहे थे, मेरे छोटे भाई ने मायूस दृष्टि से मुझे बताया कि ज़हरीली शराब की उस बोतल को अब तक छुआ भी नहीं गया था। वह शुक्रवार की सुबह थी और वह बोतल अगले दो दिन भी अनछुई पड़ी रही । फिर मंगलवार की रात में सुश्री फ़ोर्ब्स ने उस बोतल की आधी ज़हरीली शराब टेलीविजन पर कामुक फ़िल्में देखते हुए पी डाली।

किंतु बुधवार को वे पहले की तरह ही ठीक समय पर हमारे साथ सुबह का नाश्ता करने के लिए आईं। हमेशा की तरह उनका चेहरा बता रहा था कि उनकी रात अच्छी नहीं कटी थी। मोटे शीशे वाले चश्मे के पीछे मौजूद उनकी आँखें हमेशा की तरह ही आशंकित और बेचैन लग रही थीं। और वे तब और घबराई हुई लगने लगीं जब उन्हें मेज़ पर जर्मनी का डाक-टिकट लगा हुआ एक लिफ़ाफ़ा दिख गया । वे कॉफ़ी पीते हुए वह पत्र पढ़ती रहीं, हालाँकि उन्होंने कई बार हमें बताया था कि खाना खाते समय हमें कोई और काम नहीं करना चाहिए। जब वे वह पत्र पढ़ रही थीं तो हमें ऐसा लगा जैसे हम लिखे हुए शब्दों से निकलने वाली रोशनी की कौंध को उनके चेहरे पर प्रतिबिंबित देख रहे हों। फिर उन्होंने लिफ़ाफ़े पर लगी जर्मन टिकटें उखाड़ लीं और मेज़ पर एक ओर रख दीं ताकि फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया वे टिकटें अपने पति के लिए ले जा सके । वह डाक-टिकटें एकत्र करता था। हालाँकि उस दिन उनका शुरुआती अनुभव अच्छा नहीं रहा था, लेकिन इसके बावजूद वे समुद्र की गहराइयों की खोज में हमारे साथ रहीं। उस दिन हम समुद्र में तब तक गोताखोरी करते रहे जब तक हमारे ऑक्सीजन की टंकियों में मौजूद हवा ख़त्म नहीं होने लगी। उस दिन हम अच्छे व्यवहार के बारे में उनसे सीख लिए बिना ही घर चले गए। उस दिन सुश्री फ़ोर्ब्स न केवल सारा दिन रंगीन मनोदशा में रहीं बल्कि रात के भोजन के समय वे और अधिक जोश से भरी हुई लगीं। लेकिन मेरा भाई अपनी हताशा को और अधिक सहन नहीं कर सका । जैसे ही हमें भोजन शुरू करने का आदेश मिला, उसने एक भड़काऊ हरकत के साथ सेवइयों के शोरबे के कटोरे को पीछे धकेल दिया।

"यह कीड़े वाला पानी मेरी तबीयत ख़राब कर देता है, "उसने कहा। यह ऐसा था जैसे उसने मेज़ पर एक हथगोला फेंक दिया हो। सुश्री फ़ोर्ब्स का रंग पीला पड़ गया। उनके होंठ तब तक दबाव में कस गए जब तक उस काल्पनिक धमाके का धुआँ छँट नहीं गया। उनके चश्मे के शीशे आँसुओं से धुँधले हो गए । उन्होंने अपना चश्मा उतारा, अपने रुमाल से चश्मे के शीशे को पोंछा और एक लज्जास्पद हार की कड़वाहट के साथ रुमाल को मेज़ पर रखा। फिर वे खड़ी हो गईं।

"तुम लोगों का जो जी में आए, वह करो। अब यहाँ मेरा कोई अस्तित्व नहीं है।"

सात बजे के बाद से उन्होंने खुद को अपने कमरे में बंद कर लिया। लेकिन अर्द्ध-रात्रि से पहले उन्होंने सोचा कि हम सब सो गए थे। तब हमने उन्हें किसी स्कूली छात्रा की रात्रिकालीन पोशाक जैसे कपड़े पहने , आधा चॉकलेट-केक और बोतल में बची चार अंगुल ज़हरीली शराब को अपने शयन-कक्ष में ले जाते हुए देखा। मुझे उनके प्रति सहानुभूति की थरथराहट महसूस हुई।

"बेचारी सुश्री फ़ोर्ब्स, "मेरे मुँह से निकला। लेकिन मेरा छोटा भाई अब भी पहले वाली मनोदशा में ही था। "यदि वे आज रात नहीं मरीं तो बेचारे हम।" उसने कहा।

उस रात वे देर तक खुद से बातें करती रहीं। ज़ोर-ज़ोर से शिलर की कविताओं का पाठ करती रहीं। ऐसा लग रहा था जैसे पागलपन के दौरे की वजह से वे उन्मत्त हो गई हों। उनकी अंतिम चीख़ सारे मकान में गूँज गई। फिर उन्होंने अपनी आत्मा की अतल गहराइयों से निकलनेवाली कई आहें भरीं और परास्त होकर बिस्तर पर गिर गईं, गोया वे इधर-उधर बहता कोई जहाज़ हों जो लगातार एक उदास भोंपू बजा रहा हो।

पिछली रात के तनाव से अब भी ग्रस्त जब हम सुबह उठे तो पर्दों के बीच से छनकर धूप कमरे के भीतर आ रही थी। किंतु ऐसा लग रहा था जैसे पूरा मकान किसी तालाब में डूबा हुआ हो। तब हमने पाया कि लगभग दस बज गए थे , लेकिन हमें सुश्री फ़ोर्ब्स की सुबह की दिनचर्या के मुताबिक़ नहीं जगाया गया था। हमें शौचालय में पानी के बहने की आवाज़ नहीं सुनाई दी। हमें नाली के पास टोंटी के चलने की आवाज़ नहीं सुनाई दी। हमें सुश्री फ़ोर्ब्स के कमरे में से पर्दों के खींचे जाने की कोई आवाज़ नहीं सुनाई दी। उनके चलने पर उनके जूतों की कठोर ठक्-ठक् की भी कोई आवाज़ हमें नहीं आई। हमने अपने दरवाज़े पर उनके हाथों की तीन दस्तक की आवाज़ भी नहीं सुनी। मेरे छोटे भाई ने अपनी साँस रोककर दीवार से अपना कान लगा दिया ताकि बग़ल वाले कमरे से आती जीवन की धीमी -सी आवाज़ को भी वह सुन सके। अंत में उसने आज़ादी की साँस ली।

"हाँ , सही है," उसने कहा। "आप केवल समुद्र की लहरों की आवाज़ सुन सकते हैं।"

ग्यारह बजे से कुछ पहले हमने सुबह का अपना नाश्ता बना लिया। इससे पहले कि फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया बिल्लियों की फ़ौज के साथ मकान की सफ़ाई करने के लिए आती, हम ऑक्सीजन की चार टंकियाँ ले कर समुद्र-तट पर पहुँच गए। ओरेस्टे पहले से ही गोदी पर मौजूद था। उसने छह पाउंड की एक मछली पकड़ ली थी जिसकी आँखों के पास सुनहरी धारियाँ थीं। वह उसकी आँतें निकाल रहा था।

हमने उसे बताया कि हमने ग्यारह बजे तक सुश्री फ़ोर्ब्स की प्रतीक्षा की थी। चूँकि वे तब भी सो रही थीं, हमने निर्णय लिया कि हम स्वयं ही समुद्र-तट पर चले आएँगे । हमने उसे यह भी बताया कि पिछली रात खाना खाने के समय उन्हें रोने का दौरा पड़ा था। शायद वे रात में ठीक से सो नहीं पाई थीं, इसलिए वे अब भी बिस्तर पर आराम कर रही थीं।

जैसी कि हमें उम्मीद थी, ओरेस्टे की रुचि यह सब सुनने में नहीं थी। अगले एक घंटे तक समुद्र-तल पर नायाब चीज़ें खोजने के समय वह हमारे साथ रहा । फिर उसने हमें दोपहर के भोजन के लिए वापस मकान पर लौट जाने के लिए कहा। और वह अपनी नाव ले कर सुनहरी धारी वाली मछली को पर्यटकों से भरे होटलों में बेचने के लिए चला गया। पत्थर की सीढ़ियों पर पहुँच कर हम उसकी दिशा में तब तक हाथ हिलाते रहे जब तक कि उसकी नाव खड़ी चट्टान के दूसरी ओर ओझल नहीं हो गई । उसे यह लगा होगा कि अब हम सीढ़ियाँ चढ़ कर मकान में चले जाएँगे। पर हमने अपनी ऑक्सीजन की टंकियाँ लीं और बिना किसी की अनुमति के समुद्र में फिर से गोताखोरी करने लगे।

उस दिन आकाश बादलों से ढँका हुआ था और क्षितिज पर उमड़ते-घुमड़ते काले बादलों के गर्जन की आवाज़ सुनी जा सकती थी। किंतु समुद्र साफ़-सुथरा और सपाट था और उसकी अपनी रोशनी पर्याप्त थी। हम पानी की सतह पर पैंटेलेरिया प्रकाश-स्तम्भ की ओर एक सीधी रेखा में तैरते चले गए। फिर हम वहाँ दाईं ओर मुड़े और हमने सौ मीटर की दूरी और तय की। ठीक इस जगह पर हमने पानी के भीतर गोता लगाया। यह हमारे अंदाज़े से वह जगह थी जहाँ हमने गर्मियों के शुरू में समुद्र-तट पर गोताखोरी करते हुए जहाज़ को नष्ट कर देने वाले गोले पड़े हुए देखे थे। वे टॉरपीडो अब भी वहीं पड़े हुए थे: छह टॉरपीडो। वे पीले रंग में रंगे हुए थे और उन पर लिखी हुई क्रम-संख्या अब भी अक्षुण्ण थी। वे ज्वालामुखी वाले समुद्र-तल पर इतने साबुत थे कि यह आकस्मिक नहीं लगता था। हम प्रकाश-स्तम्भ के इर्द-गिर्द पानी में चक्कर लगाते रहे । दरअसल हम वहाँ वह डूब गया शहर ढूँढ रहे थे जिसके बारे में फ़ुल्विया फ़्लैमिनिया हमें अक्सर बताया करती थी। उसकी बातें हमें विस्मित कर देती थीं। लेकिन हमें वह डूबा हुआ शहर वहाँ नहीं मिला। दो घंटे बाद हमें पूरा यक़ीन हो चुका था कि अब यहाँ समुद्र-तल पर ढूँढ़े जाने के लिए कोई रहस्यमयी चीज़ नहीं बची थी। तब बहुत कम ऑक्सीजन बची होने के कारण हम हाँफ़ते हुए ऊपर पानी की सतह पर लौट आए।

जब हम समुद्र में तैर रहे थे, वहाँ गर्मियों में अक्सर आ जाने वाला तूफ़ान आ गया। समुद्र में ऊँची लहरें उठने लगीं। खून की प्यासी चिड़ियों का एक समूह वहाँ आ पहुँचा। ये चिड़ियाँ क्रोधी स्वर में चीख रही थीं और समुद्र-तट पर तड़प रही मरती हुई मछलियों पर झपट्टे मार रही थीं।

लेकिन सुश्री फ़ोर्ब्स की अनुपस्थिति में दोपहर की रोशनी हमें बिल्कुल नई लग रही थी और जीवन वाक़ई अच्छा लग रहा था। जब हम तेज हवा से जूझते हुए बड़ी चट्टान को काट कर बनाई गई सीढ़ियाँ चढ़ कर ऊपर आए , हमें अपने मकान के आगे लोगों की भीड़ दिखी। पुलिस की दो गाड़ियाँ भी मुख्य द्वार के पास ही खड़ी थीं। पहली बार हमें अपने किए का अहसास हुआ। मेरा छोटा भाई डर के मारे काँपने लगा और वह मुड़ कर वहाँ से भाग जाना चाहता था।

"मैं वहाँ भीतर नहीं जा रहा हूँ।" उसने कहा।

दूसरी ओर मेरे मन में यह भ्रामक धारणा थी कि यदि हम मृत देह को देखने जाएँगे तो कोई हम पर शक नहीं करेगा।

"आराम से रहो," मैंने उससे कहा। "एक गहरी साँस लो और केवल एक बात सोचो: हमें इसके बारे में कुछ भी नहीं पता है।"

वहाँ किसी ने भी हमारी ओर ध्यान नहीं दिया। हमने गोताखोरी में इस्तेमाल की हुई अपनी टंकियाँ, नक़ाब तथा मीनपक्ष दरवाज़े पर ही छोड़ दिए और हम बग़ल वाले बरामदे में चले गए। वहाँ दो लोग एक तख़्ते के बग़ल में बैठकर सिगरेट पी रहे थे। तब हमने पाया कि पिछले दरवाज़े के बाहर अस्पताल ले जाने वाली एक गाड़ी खड़ी थी और वहाँ कई बंदूक़धारी सैनिक भी मौजूद थे। बैठक में इलाक़े की औरतें दीवार से लगी कुर्सियों पर बैठ कर उपभाषा में प्रार्थना कर रही थीं जबकि उनके पुरुष आँगन में भीड़ की शक्ल में खड़े हो कर मृत्यु को छोड़कर अन्य सभी विषयों पर बातचीत कर रहे थे। मैंने अपने छोटे भाई के ठंडे हाथ और ज़ोर से दबाए और हमने पिछले दरवाज़े से मकान में प्रवेश किया। हमारे शयन-कक्ष का द्वार खुला हुआ था और वह ठीक उसी अवस्था में था जैसा हम उसे सुबह छोड़ कर गए थे।।

हमारे कमरे के बग़ल में स्थित सुश्री फ़ोर्ब्स के कमरे के द्वार पर एक बंदूक़धारी सुरक्षाकर्मी तैनात था, लेकिन उस कमरे का दरवाजा खुला हुआ था। हम भारी मन से उस कमरे की ओर बढ़े। इससे पहले कि हमें उस कमरे में ध्यान से झाँकने का अवसर मिलता, फ़ुल्विया फ़लैमिनिया बिजली की गति से रसोई में से बाहर आई और उसने एक डरावनी चीख के साथ उस कमरे का दरवाज़ा बंद कर दिया।

"ईश्वर के लिए , छोटे बच्चों, उनकी ओर मत देखो !"

पर तब तक देर हो चुकी थी। अपने शेष जीवन में हम वह दृश्य कभी नहीं भूल पाएँगे जो हमने तेज़ी से गुजरने वाले पल में देखा। साधारण कपड़े पहने दो लोग बिस्तर से दीवार तक की दूरी नाप रहे थे। एक और व्यक्ति श्वेत-श्याम कैमरे से तस्वीरें खींच रहा था। बिस्तर पर सिलवटें पड़ी हुई थीं। किंतु सुश्री फ़ोर्ब्स उस पर नहीं थीं। वह सूखे खून के ताल में फ़र्श पर नग्न पड़ी हुई थीं। पूरे फ़र्श पर खून के निशान थे और उनकी देह पर छुरे के कई घाव थे। उनकी देह पर कटने के सत्ताइस जानलेवा निशान थे। घावों की संख्या और हमले की निर्दयता देख कर यह अंदाज़ा लगाया जा सकता था कि यह उन्मादी हमला किसी अतृप्त प्रेमी द्वारा किया गया होगा। सुश्री फ़ोर्ब्स ने भी बिना चिल्लाए या रोए हुए इस हमले को उसी भावावेश से सहा होगा। संभवत: उस समय वे किसी सैनिक की सुंदर आवाज़ में जर्मन कवि शिलर की कविताओं का पाठ कर रही होंगी। तब उन्हें यह पता चल गया होगा कि अपनी सुखद गर्मियों की क़ीमत उन्हें ऐसे चुकानी पड़ेगी।

सुशांत सुप्रिय

भाषा विभाग: (पंजाब) तथा प्रकाशन विभाग (भारत सरकार) द्वारा रचनाएँ पुरस्कृत। कमलेश्वर.स्मृति (कथाबिंब) कहानी प्रतियोगिता (मुंबई) में लगातार दो वर्ष प्रथम पुरस्कार। स्टोरी.मिरर. कॉम कथा.प्रतियोगिता, 2016 में कहानी पुरस्कृत। साहित्य में अवदान के लिए साहित्य-सभा, कैथल (हरियाणा) द्वारा 2017 में सम्मानित, आकाशवाणी, दिल्ली से कई बार कविता व कहानी - पाठ प्रसारित। लोक सभा टी.वी के "साहित्य संसार"कार्यक्रम में जीवन व लेखन सम्बन्धी इंटरव्यू प्रसारित। लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली में अधिकारी।

निवास: A-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड, इंदिरापुरम्, ग़ाज़ियाबाद- 201014

(उ.प्र.) मो : 8512070086, ईमेल : sushant1968@gmail.com

संस्मरण

स्मृतियां

महेन्द्र "अटकलपच्चू"

मुझे याद है आज भी वो दिन जिस दिन मेरे पिताजी ने बुरी बुरी गलियां देकर घर से निकल जाने को कहा था।

बेरोजगार था काम धाम करता नही था। ऊपर से पत्नी और दो बच्चों की जबाबदारी।

मन बहुत बैचेन था। सोच रहा था कि क्या करूं ?

सोचा कही बाहर जाकर मजदूरी करके अपना और अपने बच्चों का पेट पालूंगा। पर कहां जाऊं ?

बड़े असमंजस में था मेरा मन। समझ ही नही आ रहा था कि आखिर क्या हल होगा इस समस्या का।

जेब में फूटी कौड़ी भी नही थी और पिताजी ने कह दिया था जो करना हो करो मैं कुछ नहीं जानता।

पर परमेश्वर को कुछ और ही मंजूर था। उसके आगे किसकी चलती है? कहते है ऊपर वाला जो करे सो सब होय। हम मानव की क्या बिसात ?

पड़ोसी ने बड़ी मुश्किल से 200 रुपए दिए। वो भी एक हफ्ते में वापस करने का पक्का वादा किया जब।

आखिरकार मैं पत्नी और बच्चों को छोड़कर घर से निकल ही पड़ा। शाम का समय था घर से एक फटा पुराना बैग जिसमे एक जोड़ी पुराने कपड़े और चार रोटी कपड़े की पोटली में थे। गांव से 8 किलोमीटर पैदल चलकर मुख्य सड़क पर आया। सोचा था कि कोई वाहन मिल जायेगा तो कही चला जाऊंगा। बड़ी मुश्किल से एक ट्रक मिला उसमे बैठकर सागर रात 11 बजे पहुंचा।

जैसे तैसे रात सागर में काटी , सुबह 6 बजे की बस पकड़ कर सीधा अपनी मंजिल की ओर चल पड़ा।

आज 12 वर्ष हो गए मुड़कर नही देखा। बस आगे ही बढ़ता जा रहा हूं । माता पिता और पत्नी बच्चों का साथ भी है और जीवन भी आनंद से परिपूर्ण।।

आज जब उस घटना को याद करता हूं तो समझ आता है की माता पिता की डांट बच्चों के लिए बहुत ही फायदे मंद होती है। जीवन संवार देती है। जीवन का लक्ष्य निर्धारित कर देती है। आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा देती है।

नाम : **महेन्द्र "अटकलपच्चू"**
जन्म : 22 जून 1981
जन्म स्थान : ग्राम – खैराना, तहसील– रहली, जिला– सागर , मध्य प्रदेश, **वर्त. निवास** : आर. आई. मिशन स्कूल कैंपस, ललितपुर (उत्तर प्रदेश) **शिक्षा** : एम. ए. (हिन्दी साहित्य) (डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर , मध्यप्रदेश), बी. एड (बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झांसी, उत्तर प्रदेश) **कार्य** : वर्तमान में आर. ई. मिशन जूनियर हाईस्कूल, ललितपुर, उत्तर प्रदेश में हिंदी एवम संस्कृत विषय का अध्यापन कार्य **मोबाइल** : +91885889972 (whatsapp)

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

www.epradeep.com ई - प्रदीप अंक : 04 वर्ष : 01 अक्तूबर-दिसम्बर 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

राष्ट्रीय जनजातीय नृत्य महोत्सव

सतीश उपाध्याय

जनजातीय गौरव दिवस 15 नवम्बर पर विशेष

इस संस्कृति की सुवास अक्षुण्ण रहे

15 नवंबर को जनजातीय गौरव दिवस मनाया जाता है। इस अवसर पर छत्तीसगढ़ में आयोजित हुए तीन दिवसीय आदिवासी नृत्य महोत्सव को याद कर रहा हूं। अंतरराष्ट्रीय आदिवासी नृत्य- महोत्सव के मंच से पारंपरिक जनजातीय सभ्यता, संस्कृति परंपराओं को करीब से जानने और समझने काअवसर मुझे मिला। सच कहूँ तो, इतनी आदिम जानकारी मुझे तीस वर्षों में जनजातीय संस्कृति के इतिहास और परंपराओं को खंगालने के बाद भी नहीं मिली थी।

7 देशों , भारत के 27 राज्यों एवं 6 केंद्र शासित प्रदेशों के कलाकारों ने जब साइंस कॉलेज मैदान पर मार्च पास्ट किया तो ऐसा लगा जैसे पूरे विश्व की जनजातीय संस्कृति, छत्तीसगढ़ की धरती पर उतर आई हो । पूरे भारतवर्ष में केवल छत्तीसगढ़ में ही जनजातीय संस्कृति के इस अंतरराष्ट्रीय समागम की विशेषता को देखते हुए सांसद राहुल गांधी ने भी बधाई संदेश भेजकर छत्तीसगढ़ सरकार का हौसला बुलंद किया और छत्तीसगढ़ सरकार की आदिवासी संस्कृति, कला को पोषित करने की कोशिश की सराहना की। उन्होंने कहा- "छत्तीसगढ़ सरकार -के इस पहल से आदिवासी कला संस्कृति को संवर्धन मिल रहा है।"

इस महोत्सव के शानदार आगाज से अभिभूत होकर मुख्यमंत्री ने सधे हुए एंकर की तरह महोत्सव के मुख्य अतिथि एवं झारखंड के मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन से जब पूछा कि "हमारा छत्तीसगढ़ आपको कैसा लगा? "तो उन्होंने कहा, "मुझे तो लग रहा है कि मैं झारखंड में ही हूं। छत्तीसगढ़ सरकार अपने प्रदेश के आदिवासी समुदाय की आर्थिक पिछड़ापन को दूर करने के लिए बहुत बेहतर काम कर रही है ।"उन्होंने आशा व्यक्त की कि सदियों से उपेक्षित जनजातियों को इस आयोजन से एक नई पहचान मिल सकेगी।

अंतर्राष्ट्रीय आदिवासी नृत्य महोत्सव में विदेशी कलाकारों के आने से छत्तीसगढ़ वैश्विक स्तर पर चर्चित हुआ।

विदेशी कलाकारों में नाइजीरिया, फिलीस्तीन, युगांडा, श्रीलंका, उज्बेकिस्तान, स्वाजीलैंड, माली के आदिवासी कलाकारों ने अपने अपने देश के जनजाति संस्कृति, पर्व से संबंधित विधाओ और परंपराओ को प्रस्तुत कर कार्यक्रम को और ऊंचाइयां प्रदान की। छत्तीसगढ़ की माटी को नई पहचान दी। ऐसे आयोजन से जनजाति समाज को एक नई दिशा, ताकत एवं प्रोत्साहन मिलता है।

यह सच है कि आदिवासी नृत्य महोत्सव के माध्यम से सरकार ने आदिवासियों को सम्मान देने की एक स्वस्थ परंपरा शुरू की है। इसके माध्यम से देश विदेश की जनजातियो की संस्कृति को समझने का अवसर मिलता है एवं नई पहचान के साथ कलाकारों को भी प्रोत्साहन मिलता है ।

आदिवासी बाहुल्य जिला कोरिया के विविध जन जातीय परंपराओं एवं संस्कृति के करीब मै पिछले तीस वर्षों से जुड़ा हुआ हूँ । कई विशेष जनजातियो के प्रकृति से जुड़ी परंपराओं को एवं उनकी संस्कृति को समझने के लिए कोरिया के बोडेमुड़ा जैसे आदिवासी गोड़ एवं विशेष बैगा जनजातियों की बस्तियों में भी मैने छह माह गुजारा है। पर एक ही मंच पर देश विदेश की विविध लोक कला एवं संस्कृतियों से सहजता से परिचित होने का यह मेरा पहला अवसर था।

रायपुर में 28 से 30 अक्टूबर तक संपन्न अंतरराष्ट्रीय आदिवासी नृत्य महोत्सव महज एक मनोरंजन एवं रोमांच का ही दस्तक नहीं था, बल्कि इन जनजातियों का प्रकृति,जल, जंगल, जमीन के साथ आत्मीय रिश्ता एवं पर्यावरण संरक्षण की दिशा में इनके आदिम सोच को जनमानस तक पहुंचाने का एक सरस माध्यम था। या कहें कि-आदिवासियों के पारंपरिक त्यौहार, अनुष्ठान फसल कटाई, कृषि आपसी रिश्तों एवं अन्य पारंपरिक विधाओं को समझने के लिए यह एक साझा और जीवंत मंच था।

उत्तर प्रदेश, बिहार के कलाकारों के साथ जब छत्तीसगढ़ के कलाकारों ने अपने पारंपरिक करमा नृत्य की प्रस्तुति दी तो लोगों को छत्तीसगढ़वासियों को अपनी माटी की सांस्कृतिक महक का आभास हुआ। बिहार लोक नर्तक दल का मयूरपंख नृत्य, उत्तरप्रदेश के कलाकारों के करमा नृत्य में वृक्षों की पूजा, पुरुषों एवं स्त्रियों द्वारा ढोल और तालियों की

सुंदरता, वृक्ष की परिक्रमा, वन संपदा और प्रकृति से जुड़े मनोभाव को धरती माता एवं प्रकृति के पंच तत्वों की महत्ता, एवं अपने आराध्य की पूजा,उनके पारंपरिक परिधान,जन मानस को प्रकृति का संरक्षण संदेश देते नजर आए। वहीँ अंतरराष्ट्रीय कलाकारों द्वारा आकर्षक बहुरंगी छटा देखने को मिली,। उज़्बेकिस्तान न्यूजीलैंड ,श्रीलंका और युगांडा सहित देश के विभिन्न राज्यों के नृत्य की अनुशासित एवं सजी हुई मनोरंजक प्रस्तुति जब नजर के सामने आई तो मैंने सोचा भी नहीं था कि छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर में कभी विश्व के इन देशो के ऐसे आदिवासी नृत्य देखने का अवसर मिलेगा।

इस डांस फेस्टिवल में मनोरंजन यही कारण था। इस आदिवासी नृत्य महोत्सव में शुभारंभ के अवसर पर झारखंड के मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन बतौर मुख्य अतिथि के रूप में शामिल हुए एवं देश-विदेश के विभिन्न आदिवासी कलाकारों के रंगारंग कार्यक्रम को देखकर भाव विभोर हो उठे ।उन्होंने अपने संबोधन में कहा- छत्तीसगढ़ पूरे देश में ऐसा राज्य है जहां पर ऐसा अद्भुत आयोजन हो रहा है जो अकल्पनीय है।

सीएम सोरेन ने भूपेश बघेल को धन्यवाद ज्ञापित करते हुए कहा छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री शोषित आदिवासियों को सम्मान देने एवं उन्हे बराबर का दर्जा देकर उन्हें समाज की मुख्यधारा में जोड़ रहे हैं । देश के 27 राज्यों और 6 केंद्र शासित प्रदेशों के कलाकारों के साथ 7 देशों में नाइजीरिया, उज्बेकिस्तान ,श्रीलंका, युगांडा ,सूजी लैंड मालदीप, वैलेंटाइन और सीरिया से आए विदेशी कलाकारो ने छत्तीसगढ़ राज्य को खूब पसंद किया। आदिवासी कलाकारों ने मुक्त कंठ से

छत्तीसगढ़ शासन की सराहना की। अपनी कला के प्रदर्शन के दौरान कलाकारों में भारी उत्साह देखा गया।

राजस्थान के कलाकारों से मैं व्यक्तिगत रूप से मिला। छत्तीसगढ़ आकर वे बेहद खुश एवं उत्साहित नजर आये । राजस्थान के एक कलाकार ने कहा -जीवन में पहली बार इतना सम्मान, मुझको मिला यह मेरे जीवन के सबसे अद्भुत पल है । आदिवासी समाज से आने वाले झारखंड सीएम हेमंत सोरेन ने भी कहा कि "मैं स्वयं आदिवासी समाज से आता हूं और वास्तव में आदिवासियों के सामने चुनौती काफी गहरी होती है।

आज मुझे मुख्य अतिथि के रूप में मुझे आने का मौका मिला है और यदि मैं मुख्य अतिथि नहीं भी होता, तो छत्तीसगढ़ की जनजाति समाज के बीच छत्तीसगढ़ जरूर आता। उन्होंने कहा कि इस कार्यक्रम से आदिवासी जनजातियों को एक विशेष प्रोत्साहन मिला है "। इस बात का समर्थन करते हुए मैं भी एक कहना चाहता हूं कि -आदिवासियों के उत्थान में सचमुच यह सरकार प्रतिबद्ध है ,-गोधन न्याय योजना या नरवा,गरवा, घुरवा, बाड़ी, भूमिहीनो के लिए न्याय योजना, हाट बाजार क्लीनिक ,आदिवासी समाज के क्रांतिवीर झाड़ा सिरहा के नाम पर इंजीनियरिंग महाविद्यालय धरमपुरा की घोषणा आदि निर्णय से जनजाति वर्ग से निकट का रिश्ता रखने वाले राज्य के मुखिया का चेहरा सामने आता है। आदिवासियों के उत्थान के लिए, उनको आर्थिक मजबूती प्रदान करने के लिए एवं जमीन से जुड़ी तमाम संचालित सरकारी योजनाओं से छत्तीसगढ़ के आदिवासियों को विशेष संबल मिला है, वहीं इनके मान सम्मान को एक नई पहचान भी मिली है। मुख्यमंत्री भूपेश बघेल की यह दूरदर्शी सोच का ही परिणाम था कोरोना काल में जब पूरे देश में मंदी छाई हुई थी तब छत्तीसगढ़ के बाजार गुलजार था। दो रुपए गोबर खरीदने वाला छत्तीसगढ़ राज्य देश का पहला राज्य है। आदिवासी संस्कृति से जुडे इन राज्यों से आए कलाकारों ने मुक्त कंठ से यह कहा कि -हम छत्तीसगढ़ आकर अपने आपको गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं। इस महोत्सव में विविध रंग देखने को मिले। उत्तराखंड के , थारू समुदाय का -झीझीहन्ना लोक नृत्य ,छत्तीसगढ़ का करमा लोक नृत्य में पर्यावरण संरक्षण का संदेश छुपा हुआ है।,तेलगांना का गुसाड़ी नृत्य, झारखंड का उराव,राजस्थान का गैर घुमरानृत्य, जम्मू कश्मीर का धमाली,छत्तीसगढ़ का गौर सिंग नृत्य , प्रकृति एवं उसके महत्व को प्रतिपादित करने प्रकृति के संरक्षण में विशेष भूमिका निभाती है। इस वैश्विक स्तर पर आयोजित इस महोत्सव में विभिन्न राज्यों से आए कलाकारों ने छत्तीसगढ़ को समझने के लिए विभिन्न स्टालों का भी बारीकी से अवलोकन किया।

जनसंपर्क विभाग द्वारा फोटो प्रदर्शनी के माध्यम से देश विदेश के कलाकारों ने छत्तीसगढ़ राज्य के पर्यटन ,पारंपरिक वेशभूषा ,गहने वाद्य यंत्रो से परिचित हुए ,कई कलाकार तो इस बात के लिए छत्तीसगढ़ की धरती को पावन धरती की संज्ञा दी जब उन्हें बताया गया कि मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम चौदह वर्ष के अपने वनवास का अधिकांश समय

छत्तीसगढ़ में ही गुजारा है। वे इस बात पर नतमस्तक हुए जब उन्होंने सुना कि राम वन गमन पथ परियोजना के माध्यम से राम वन गमन पथ को आने वाले समय में दर्शनीय तीर्थ की संज्ञा दी जा रही है।

प्रदेश के दूसरे अंतरराष्ट्रीय आदिवासी नृत्य महोत्सव में 1000 कलाकारों की उपस्थिति थी जिसमें 27 राज्य और 6 केंद्र शासित प्रदेशों के 59 आदिवासी नर्तक दल शामिल हुए। जिसमे 63 विदेशी कलाकार थे। इस महोत्सव में हथकरघा वस्त्रों, हस्तशिल्प के स्टाल ,फूड एरिया के स्टाल भी लगे हुए थे। इन स्टॉलो का निरीक्षण करते हुए दो आदिवासी बहुल राज्यो छत्तीसगढ़ एवं झारखंड के मुख्यमंत्रियो ने पांरपरिक वाद्य यंत्र -"ठोड़का"और "तुरही" भी बजाया तो , पूर्व राज्यसभा सदस्य बीके हरिप्रसाद एवं युगांडा और पेलिस्टाईन के काउंसलर ने गौर मुकुट लगाकर ,मांदर की थाप देकर महोत्सव के आदिवासी नृत्य महोत्सव के कलाकारो का उत्साह वर्धन भी किया। आदिवासी संस्कृति के अनुरूप आदिवासी कलाकारों के पारंपरिक पोशाक, आभूषण, मोर पंख से बने मुकुट ढोल ,मजीरा ,जवारा कलश, चंग ,मृदंग को न केवल बारीकी से देखा बल्कि उसकी खूबियां भी बताई। छत्तीसगढ़ के हजारों लोगों ने अलग-अलग राज्यों एवं देशों से आए हुए आदिवासी संस्कृति के फसल कटाई, विवाह ,पर्व, त्यौहार के मौके पर किए जाने वाले नृत्यो को खूब पसंद किया। रामायण, महाभारत जैसे प्रसंगों पर आधारित कथाओं पर कलाकारों द्वारा प्रस्तुत नृत्य से दर्शकों को पौराणिक संदर्भों की नई जानकारी मिली।

छत्तीसगढ़ के सुकमा जिले के आदिवासियों के दल ने मादर की थाप के साथ जब हाथों में अपने पारंपरिक वाद्य यंत्र के साथ ,हाथों में डंडा, मोर पंख, तीर कमान, भाला, बरछी लेकर जब अपने सधे हुए कदमो से मंच पर नृत्य किया तो दर्शक झूम उठे। दर्शकों को तेलंगाना के गुसाड़ी डीम्सा नृत्य, झारखंड का उरांव नृत्य राजस्थान का गैर घुमरानृत्य जम्मू कश्मीर का धमाली,छत्तीसगढ़ का गौर सिंग नृत्य , पर हाथो से ताली की थाप देते देखा गया। इसी प्रकार निकोबारी नृत्य, अंडमान और निकोबार, राजस्थान का स्वांग, गुजरात का- वासवा,झारखंड का-छाऊ, पंश्चिम बंगाल का- संथाली, मणिपुर का-खरिंग खरग फेचक, लद्दाख का- घा हानू, नागालैण्ड कामाकहनिची, राजस्थान कागारसिया, छत्तीसगढ़ का

हारूल, करमा, झैंता,उतराखंड का-हरिण नृत्य को भी दर्शकों ने खूब बहुत पसंद किया। आदिवासी नृत्य महोत्सव में कलाकारों ने देश प्रेम के प्रसंगों को भी अपने नृत्य में पिरोया । उन्होंने अपने वीर सैनिक , योद्धाओं के शौर्य को अपने नृत्य में बखूबी प्रस्तुत किया।

छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री भूपेश बघेल का आदिवासी समाज की भाषा संस्कृति लोक कला परंपरा की अमूल्य विरासत को पहचान देने एवं जनजातीय समुदाय की लोक कला और संस्कृति के संरक्षण के उद्देश्य से आयोजित देश-विदेश में चर्चित अंतरराष्ट्रीय जनजातीय नृत्य महोत्सव छत्तीसगढ़ के इतिहास का दूसरा सुनहरा पन्ना कहा जाए, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। सुखद बात तो यह रही अपने आथित्य से भाव विभोर छत्तीसगढ़ से अपनी सुनहरी यादों के साथ देश दुनिया के आदिवासी विदा हुए, वो कलाकार छत्तीसगढ़ के इस जनजातीय समागम को शायद इतनी जल्दी भुला न पाएँगे। बस कामना यही है कि आदिवासी संस्कृति की सुवास हरदम अक्षुण्ण रहे।

सतीश उपाध्याय

मनेंद्रगढ़, कोरिया छत्तीसगढ़, मो. 93000-91563, ई-मेल- satishupadh-yay36@gmail.com, **परिचय:** नवसाक्षर साहित्य माला ऋचा प्रकाशन दिल्ली द्वारा एवं नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा दो पुस्तकों का प्रकाशन

शिक्षा में बहुभाषिकता- चुनौतियाँ एवं

दिनेश कुमार गुप्ता

सारांश: भूमंडलीकरण के इस युग में आज विश्व के सभी देश सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक इत्यादि जीवन के सभी क्षेत्रों में एक-दूसरे पर निर्भर हैं। वैश्वीकरण की यह प्रक्रिया एक तरफ़ तो विभिन्न भाषा, संस्कृति के लोगों को एक- दूसरे के निकट लाती है, वहीं दूसरी ओर उनके समक्ष अनेक चुनौतियाँ भी खड़ी करती है। इस समय पूरे विश्व में लगभग 6909 भाषाएँ अस्तित्व में हैं, जिनमें से कुछ विलुप्तता के कगार पर हैं। भारत में 22 भाषाएँ भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में सूचीबद्ध हैं तथा लगभग 700 से अधिक भाषाएँ व्यावहारिक रूप से बोली जाती हैं। भारत एक बहुभाषिक, बहुसांस्कृतिक, बहुधार्मिक एवं बहुजातीय देश है और यही इसकी अनूठी विशेषता भी है। इसे देश की एकता, अखण्डता एवं विभिन्न जाति, धर्म, भाषा एवं संस्कृति के लोगों के समन्वित विकास के लिए संरक्षित एवं संवर्द्धित किया जाना अति आवश्यक है और यह कार्य भारतीय शैक्षिक व्यवस्था में बहुभाषिकता को अपनाकर ही किया जा सकता है। हमें विभिन्न भाषा, संस्कृति एवं क्षेत्र के विद्यार्थियों को उनकी स्वाभाविक भाषायी, सांस्कृतिक तथा क्षेत्रीय विशेषताओं एवं विभिन्नताओं के साथ स्वीकार करना होगा तभी हम अपनी शैक्षिक व्यवस्था में सभी विद्यार्थियों को, समावेशित कर पाएँगे। किंतु यह एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।

शब्द बीज- शिक्षा, बहुभाषिकता, चुनौतियाँ, संभावनाएँ।

पारस्परिक निर्भरता के इस युग में विश्व समुदाय को वैश्वीकरण के प्रभावस्वरूप कुछ चुनौतियों का सामना भी करना पड़ रहा है जिसमें पूर्ण विश्व में एक भाषा एवं संस्कृति को फैलाने का प्रयास एक प्रमुख चुनौती है। भाषायी-सांस्कृतिक साम्राज्यवाद या भाषायी-सांस्कृतिक वर्चस्व स्थापित करने का प्रयास इस भूमंडलीकृत विश्व में बहुभाषिकता के लिए प्रमुख चुनौती है इसके लिए भूमंडलीकरण के कारण उपजी परिस्थितियाँ ही ज़िम्मेदार हैं "आज व्यक्ति की नजर में किसी भाषा की महत्ता सामान्यतया इससे तय नहीं होती कि इसका सम्बन्ध उसकी जातीय और सांस्कृतिक पहचान से है अथवा यह उसकी मातृभाषा है

बल्कि इससे तय होता है कि यह भाषा बाज़ार में कितनी दौड़ सकती है .. यदि भूमंडलीकरण निरंकुश ढंग से इसी प्रकार जारी रहा, तो यह विश्व की सैंकड़ों भाषाओं का चेहरा बिगाड़ देगा, सैंकड़ों भाषाओं को चबा जायेगा और सांस्कृतिक विविधता को उजाड़ देगा।"

भाषा मानव मन की भावनाओं को अभिव्यक्त करने का सशक्त साधन है। साथ ही लोगों को एक-दूसरे से जोड़ने का माध्यम भी। शैक्षिक एवं सामाजिक संदर्भ में हम देखें तो भाषा के मुख्यतः तीन पक्ष हैं। एक तो यह कि भाषा संप्रेषण का माध्यम है और इसके द्वारा ही मनुष्य अपने समाज का निर्माण करता है। इसके बिना किसी समाज का निर्माण नहीं हो सकता, क्योंकि भाषा के बिना लोग आपस में विचार-विनिमय ही नहीं कर सकते। दूसरा यह कि भाषा का बुनियादी कार्य मनुष्य को सजग और सचेत बनाना है। इस प्रकार आत्म-बोध और जगत-बोध, दोनों का माध्यम भाषा ही है। भाषा का तीसरा महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि उसमें मनुष्य अपनी सृजनशीलता व्यक्त करता है। मनुष्य जो कुछ रचता है, उससे ही संस्कृतियों का निर्माण होता है। भाषा के बिना संस्कृति की कल्पना नहीं की जा सकती। हम देखते हैं तो पाते हैं कि विभिन्न संस्कृतियों के नाम उनकी भाषाओं से जुड़े हुए हैं जैसे— बांग्ला संस्कृति, मराठी संस्कृति, तमिल संस्कृति इत्यादि। इसी तरह हम विश्व में जर्मन संस्कृति, रूसी संस्कृति, चीनी संस्कृति इत्यादि को भी देख सकते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि विभिन्न भाषाओं के विकास एवं संवर्द्धन द्वारा ही मानव समाज की विभिन्न संस्कृतियों का विकास एवं संवर्द्धन संभव है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षा में बहुभाषिकता के समक्ष चुनौतियाँ भारतीय संदर्भ में यदि हम देखें तो शिक्षा में बहुभाषिकता को अपनाना आसान नहीं है। इस मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ एवं चुनौतियाँ हैं, जिन्हें हम निम्न रूपों में देख सकते हैं-

♦एक भाषा में अपने बोलने वालों की पहचान, उनकी अभिवृत्ति, उनकी आकांक्षाओं एवं उनकी संस्कृति को अभिव्यक्त करने की असीम शक्ति होती है। किसी समाज में कुछ सामाजिक एवं राजनीतिक कारक उस समाज की कुछ भाषाओं को अन्य भाषाओं से प्रतिष्ठित बना देते हैं, जिससे वे उस समाज में एक मानदण्ड के रूप में प्रतिष्ठित हो जाती है।

साम्राज्यवाद या भाषायी-सांस्कृतिक वर्चस्व स्थापित करने का प्रयास इस भूमंडलीकृत विश्व में बहुभाषिकता के लिए प्रमुख चुनौती है इसके लिए भूमंडलीकरण के कारण उपजी परिस्थितियाँ ही ज़िम्मेदार हैं "आज व्यक्ति की नजर में किसी भाषा की महत्ता सामान्यतया इससे तय नहीं होती कि इसका सम्बन्ध उसकी जातीय और सांस्कृतिक पहचान से है अथवा यह उसकी मातृभाषा है बल्कि इससे तय होता है कि यह भाषा बाज़ार में कितनी दौड़ सकती है .. यदि भूमंडलीकरण निरंकुश ढंग से इसी प्रकार जारी रहा, तो यह विश्व की सैंकड़ों भाषाओं का चेहरा बिगाड़ देगा, सैंकड़ों भाषाओं को चबा जायेगा और सांस्कृतिक विविधता को उजाड़ देगा"।

समाज के सभी सदस्य उस भाषा से ही अपनी पहचान, सम्मान एवं योग्यता को जोड़कर देखने लगते हैं। यह बहुभाषिकता के लिए खतरनाक है। भारतीय परिदृश्य में भी परिस्थितियाँ कुछ ऐसी ही हैं। आज भारत में अंग्रेज़ी एक वर्चस्वशाली भाषा की स्थिति में है। यह उच्च एवं संभ्रांत वर्ग की भाषा मानी जाती है और लोग इसे पद, प्रतिष्ठा एवं रोज़गार से जोड़कर भी देखते हैं। डॉ. राममनोहर लोहिया का भी मानना था कि, "अंग्रेज़ी के साथ-साथ जो रूतबा और पैसा जुड़ा हुआ है, इसलिए अंग्रेज़ी चल रही है" (लोहिया, 2013, पृ. 88)।

आज अंग्रेज़ी वैश्विक रूप से एक शक्तिशाली भाषा है। विद्यालय से लेकर बाज़ार तक यह भाषायी पदानुक्रम में सबसे ऊपर स्थित है। अतः ऐसे परिदृश्य में अभिभावक भी अपने बच्चों को अंग्रेज़ी माध्यम के विद्यालयों में ही पढ़ाना चाहते हैं, जिससे उन्हें अपनी सफलता के पर्याप्त अवसर प्राप्त हो सकें।

"हमारी प्रारम्भिक से उच्च शिक्षा तक आज भी अंग्रेज़ी की मोहताज है या बनादी गई है। धीरे-धीरे पूरी शिक्षा पद्धति अंग्रेज़ी के मकड़जाल में और फँसती जा रही है। गाँव-गाँव में इंग्लिश मीडियम में बच्चों को पढ़ाने का चलन बढ़ा है" (मिश्र, 2017, पृ.12)। इस प्रकार शैक्षिक व्यवस्था में एक ही भाषा का यह बढ़ता हुआ वर्चस्व शिक्षा में बहुभाषिकता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर रहा है।

♦ भारतीय शैक्षिक व्यवस्था में बहुभाषिकता के विकास के मार्ग में एक अन्य सबसे प्रमुख चुनौती भारत की भाषायी राजनीति है। स्वतंत्रता के पश्चात 1960 के दशक में भारत में भाषा की राजनीति विकराल एवं जटिल रूप में उभरी है राजनीतिक दलों ने अपने संकीर्ण राजनीतिक लाभ के लिए भाषा के आधार पर लोगों की क्षेत्रीय भावनाओं को बढ़ावा दिया। एक ओर उत्तर भारत के राज्यों में 'अंग्रेज़ी विरोधी' प्रदर्शन एवं उपद्रव हुए

तो दूसरी ओर दक्षिण के राज्यों के नेताओं को ऐसा लगा कि उन पर हिन्दी थोपी जा रही है अतः उन्होंने हिन्दी विरोध' को उग्र रूप दिया, जैसे— तमिलनाडु में 'द्रविड़ मुनेत्र कड़गम' ने 1965 ई. में एक विशाल भाषा आंदोलन को प्रायोजित किया और 1967 ई. के चुनाव में इसने भाषायी आंदोलन की पृष्ठभूमि में चुनाव लड़कर राजनीतिक सफलता भी प्राप्त की। इस प्रकार इन संकीर्ण भाषायी आंदोलनों से भारतीय शैक्षिक व्यवस्था में बहुभाषिकता प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुई एवं इससे अंग्रेज़ी का भाषायी वर्चस्व और बढ़ा एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का विकास अवरुद्ध हुआ। इसने भाषायी असहिष्णुता को बल प्रदान किया। हमारे देश में विद्यालयों की संरचनात्मक बाधाएँ भी बहुभाषिकता को बढ़ावा देने में कठिनाई उत्पन्न करती हैं। विद्यालय के पास प्रत्येक विषय के शिक्षण के लिए कुछ निर्धारित समय होता है और इस निर्धारित समय में ही शिक्षकों को अपना पाठ्यक्रम पूरा करना पड़ता है। शिक्षकों के पास बहुभाषिकता कोबढ़ावा देने हेतु नवीन रणनीतियों के निर्माण के लिए पर्याप्त समय नहीं होता है। उन्हें शैक्षणिक गतिविधियों के अतिरिक्त अन्य गैर -शैक्षणिक शासकीय कार्य भी करने पड़ते हैं। अतः इससे शिक्षा में बहुभाषिकता का विकास अवरुद्ध होता है।

♦ भारत में शिक्षक-प्रशिक्षण का दोषपूर्ण पाठ्यक्रम भी शिक्षा में बहुभाषिकता के समक्ष एक प्रमुख चुनौती है। हमारे देश में शिक्षकों का प्रशिक्षण इस ढंग से नहीं हो पा रहा है कि वे विभिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक, क्षेत्रीय एवं भाषायी पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों की भाषायी विशिष्टताओं को समझ सकें, उनसे उनकी भाषा में विमर्श कर सकें तथा उनके प्रश्नों को संबोधित करते हुए कक्षा में विमर्श का एक बहुभाषिक वातावरण तैयार कर सकें।

हमारे देश की दोषपूर्ण भाषा-नीति भी शिक्षा में बहुभाषिकता के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करती है भारत में सैकड़ों भाषाएँ एवं बोलियाँ बोली जाती हैं किंतु हमारे संविधान में मात्र 22 भाषाओं को ही आठवीं अनुसूची में सवंधैानिक दर्जा दिया गया है प्रश्न उठता है कि आठवीं अनुसूची में भारत की जिन भाषाओं को हमने स्थान दिया है उसका आधार क्या है और जिन भाषाओं को उसमें स्थान नहीं दिया गया है वह किस आधार पर नहीं दिया गया है इसके साथ ही हमारे देश में ऐसी बहुत-सी भाषाएँ हैं जिन्हें स्थानीय बोलियाँ कहा जाता है इन्हें महत्वहीन मानकर क्या हम इनके बोलने वालों के साथ अन्याय नहीं कर रहे हैं एक बहुभाषिक राज्य में भाषा और बोली में फ़र्क करना अनुचित, अन्यायपूर्ण, अमानवीय तथा जनतांत्रिक मूल्यों के विरुद्ध है इस सदंर्भ में लिंग्विस्टिक इंपरियलिज़्म पुस्तक में रॉबर्ट फिलिपसन द्वारा उद्धृत कथन हमेशा याद रखने लायक है कि, "बोली और कुछ नहीं केवल एक हरा दी गयी भाषा है और भाषा एक बोली ही है जो राजनीतिक रूप से जीत गयी है (उपाध्याय और उपाध्याय, 2008, पृ 44)।

इस प्रकार स्पष्ट है कि इन स्थानीय बोलियों को हमने अपने शैक्षिक पाठ्यक्रम और विमर्श का हिस्सा नहीं बनने दिया, जिससे आज अधिकांश बोलियाँ विलुप्तता के कगार पर पहुँच गई है इससे बहुभाषिकता को गहरा आघात पहुंचा है इसके साथ ही हमने शैक्षिक व्यवस्था में त्रिभाषा-फ़ार्मूले को भी उसकी अवधारणात्मक कमियों को दूर कर सच्ची भावना के साथ लागू करने का प्रयास नहीं किया है।

♦इसके अलावा, भारत की अनेक क्षेत्रीय भाषाओं एवं बोलियों को वैज्ञानिक एवं तकनीकी रूप से हमने समृद्ध बनाने का सच्चे मन से प्रयास नहीं किया। जिसके कारण ये भाषाएँ उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान की भाषा नहीं बन सकीं तथा लोगों का इनसे मोहभंग हुआ और शैक्षिक व्यवस्था में कुछ भाषाओं का वर्चस्व स्थापित हो गया। "अगर आजादी के बाद भारतीय भाषाओं का विकास किया गया होता तो हमारी भाषाएँ अंग्रेज़ी से टक्कर ले सकती थी। लेकिन उनका विकास नहीं किया गया और अंग्रेज़ी को विभाजन के औजार के रूप में बनाये रखा गया। इसी का नतीजा है कि हमारी भाषाओं में विज्ञान एवं तकनीकी की बहुत सारी शब्दावली नहीं है और हमें अंग्रेज़ी की शब्दावली से काम चलाना पड़ता है" (उपाध्याय और उपाध्याय, 2009, पृ.14) ।

भारतीय शैक्षिक व्यवस्था में बहुभाषिकता को बढ़ावा देने हेतु उपाय सर्वप्रथम, अपनी भाषा-नीति निर्धारित करते समय हमें यह देखना होगा कि भाषा समता का आधार हो, परस्पर आदान-प्रदान और मेल-जोल का माध्यम हो न कि भेदभाव अथवा वर्ग विभाजन का। भारत की भाषायी विविधता हमारे समक्ष जटिल चुनौती तो पेश करती है, किंतु यह हमें कई प्रकार के अवसर भी देती है, जिनका लाभ शिक्षा में बहुभाषिकता को बढ़ावा देने के लिए प्राप्त किया जा सकता है। गांधीजी ने हिन्द स्वराज में ठीक ही कहा है कि, "मुझे तो लगता है कि हमें अपनी सभी भाषाओं को उज्ज्वल-शानदार बनाना चाहिए" (गांधी,2014, पृ.69)।

शिक्षा में बहुभाषिकता के लिए यह अति आवश्यक है कि हमारे देश की जितनी भी भाषाएँ हैं, वे सभी संरक्षित की जाएँ तथा आपसी आदान-प्रदान के ज़रिए समृद्ध बनें। भारत में आज भी ऐसी बहुत-सी भाषाएँ हैं, जिन्हें स्थानीय बोलियाँ कहा जाता है। इन बोलियों की कोई लिपि और व्याकरण नहीं बना है, लेकिन इनमें गीतों, कहानियों आदि की बहुत समृद्ध मौखिक परम्पराएँ हैं, जो विद्यार्थियों के सामाजिक जीवन से जुड़ी होती हैं। शैक्षणिक विमर्श में यदि इन बोलियों को सम्मिलित किया जाए तो इससे भी बहुभाषिकता को बढ़ावा मिलेगा। इस तथ्य पर बल देते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा 'भारतीय भाषाओं के शिक्षण' पर गठित राष्ट्रीय फ़ोकस समूह का आधार पत्र में भी कहा गया है कि, "यदि हम चाहते हैं कि ऐसा जनतंत्र पनपे जिसमें सभी की भागीदारी संभव हो सके तो हमें प्रत्येक बच्चे को उसकी भाषा में सुनना होगा... त्रिभाषा-सूत्र को कार्यान्वित करने के लिए कड़े नियमों के बजाए बहुभाषिकतावाद को बनाये रखने व इसे जीवंतता प्रदान करने का प्रयास किसी भी भाषा, योजना का केन्द्र होना चाहिए" (राष्ट्रीय फ़ोकस समूह का आधार पत्र, 2009,पृ.21)।

♦ इसके साथ ही, शिक्षा में बहुभाषिकता को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है कि हम अपनी क्षेत्रीय भाषाओं एवं बोलियों को संरक्षित एवं विकसित कर वैज्ञानिक एवं तकनीकी रूप से उन्हें दक्ष बनाएँ जिससे ये भी इंटरनेट, उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान की भाषा बन सकें तथा इन क्षेत्रों में कुछ भाषाओं का जो वर्चस्व स्थापित है वह समाप्त हो सके।

शिक्षा में बहुभाषिकता के लिए ज़रूरत इस बात की है कि पाठ्यचर्या निर्माता, पाठ्यपुस्तक लेखक, शिक्षक, माता-पिता या अभिभावक बहुभाषिकता की महत्ता को समझें ताकि वे बच्चों को अपने इर्द-गिर्द मौजूद सांस्कृतिक और भाषिक विविधता के प्रति सुग्राही बना सकें और उन्हें अपने विकास के संसाधन के रूप में प्रयुक्त करने के प्रति प्रोत्साहित करें। इस तथ्य पर बल देते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण' पर गठित राष्ट्रीय फ़ोकस समूह का आधार पत्र में भी कहा गया है कि, "हम पाठ्यचर्या निर्माताओं पाठ्यपुस्तक लिखने वालों, शिक्षकों और माता-पिता का ध्यान अल्पसंख्यकों व आदिवासियों द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं और विलुप्तता के कगार पर खड़ी भाषाओं की ओर दिलाना चाहते हैं ये भाषाएँ हमारी समृद्ध सांस्कृतिक परम्पराओं और ज्ञान व्यवस्था का खजाना हैं और हमें उन्हें जीवंत रखने का हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। विद्यालयी पाठ्यचर्या में इनके लिए प्रावधान रखकर ही हम इस कार्य को सम्पन्न कर सकते हैं" (राष्ट्रीय फ़ोकस समहू का आधार पत्र, 2009, पृ 17)। यही बात राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में भी कही गई है कि, "बच्चे प्रारम्भ से ही बहुभाषिक शिक्षा प्राप्त कर सकें। 'त्रिभाषा-फार्मूला' को उसके मूलभाव के साथ लागू किए जाने की जरूरत है, ताकि वह बहुभाषी देश में बहुभाषी संवाद के माहौल को बढ़ावा दे" (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, पृ.42)। इस प्रकार, भाषा को लेकर पाठ्यचर्या में ऐसी नीति अपनाने से विद्यालयों में बहुभाषिकता को बढ़ावा मिलेगा।

निष्कर्ष:

भारत एक बहुभाषी देश है। भारत की यह अनूठी भाषायी विविधता एक तरफ़ तो जटिल चुनौती पेश करती है, किंतु दूसरी तरफ़ कई प्रकार के अवसरों को भी लाती है। आज हमें भाषा को वर्चस्व के माध्यम के रूप में न देखकर अभिव्यक्ति एवं सामाजिक संबंधों के निर्माण के माध्यम के रूप में देखने की आवश्यकता है, तभी हम सच्चे अर्थों में बहुभाषिकता को बढ़ावा दे सकेंगे एवं शैक्षिक व्यवस्था में विभिन्न भाषाओं को अपनाने के प्रति उदार तथा सहिष्णु बन सकेंगे।

संदर्भ

- उपाध्याय, रमेश और संज्ञा (संपादक). 2008. भाषा और भमूण्डलीकरण, शब्द संधान, नयी दिल्ली, पृ. 44
- उपाध्याय, रमेश और संज्ञा (संपादक) 2009. सांस्कृतिक साम्राज्यवाद, शब्द संधान, नयी दिल्ली, पृ.14 गांधी, महात्मा 2014. हिन्द स्वराज, शिक्षा भारती, दिल्ली पृ. 69
- ग्रियर्सन, जी. ए. 1927. लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ़ इंडिया. मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वॉल्यूम 01
- http://www.censusindia.gov.in.
- मंगलानी, रूपा. 2009. भारतीय शासन एवं राजनीति. (तृतीय संस्करण). हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, राजस्थान, पृ. 505.
- मिश्र, बुद्धिनाथ. 2017. आठवीं अनुसूची की भाषायी राजनीति. हिन्दुस्तान नयी दिल्ली, पृ. 12.
- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2005. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005.
- रा. शै. अ.प्र.प., नयी दिल्ली, पृ. 42 लोहिया, राममनोहर. 2013. समता और सम्पन्नता. (चतुर्थ संस्करण). लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.88.

दिनेश कुमार गुप्ता
प्रवक्ता, अग्रवाल महिला शिक्षक प्रशिक्षण
महाविद्यालय, गंगापुर सिटी, जिला- सवाई
माधोपुर (राजस्थान)322201
दूरभाष : 9462607259
अणुमेल : dineshg.gupta397@gmail.com

समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में अभिव्यक्त उपभोक्तावादी संस्कृति

डॉ अनीता यादव

सारांश - वर्तमान समय में बाजार बहुराष्ट्रीय कंपनियों के रूप में वैश्विक पूंजी पर अपना आधिपत्य जमा चुका है। इससे किसी भी राष्ट्र का बच पाना लगभग असंभव है। उपभोक्तावादी संस्कृति ने एक नई 'शॉर्टकट' अपसंस्कृति को जन्म दिया जो मानवता के लिए एक बड़ा खतरा है। साम्राज्यवाद का यह नव साम्राज्यवादी स्वरूप बाजार के रूप में व्यक्ति के जीवन,उसके परिवार, उसके रिश्ते और नातो में एक क्रांतिकारी बदलाव और बिखराव पैदा कर रहा है जो जीवन को एक नई दिशा की बजाय गर्त की ओर अग्रसर है। रेडियो टेलीविजन कंप्यूटर और मोबाइल ने एक कदम आगे बढ़कर दुनिया कर लो मुट्ठी में के रूप में ग्लोबल विलेज की परिकल्पना को साकार किया। टेलीमार्केटिंग ऑनलाइन शॉपिंग ट्रेडिंग परचेसिंग की नई अवधारणा वैश्विक परिदृश्य पर उतर आई। कंपनियों की मुनाफाखोरी और इन कंपनियों में काम करने वालों के टारगेट लक्ष्य पूरा करने की होड़ ने जीवन को पूरी तरह बदल कर रख दिया। एक सुनियोजित तरीके से बाजार ने पूरी दुनिया को अपना दास बना डाला। व्यक्ति व्यक्ति ना होकर 'कमोडिटी' में बदल गया। इसी उपभोक्तावादी संस्कृति का चित्र समकालीन हिंदी कथा साहित्य में अपने सभी रूपों में अभिव्यक्त हुआ है।

बीज शब्द एवं भूमिका -आज हम ऐसे दौर से गुजर रहे हैं जिसे संक्रमण काल कहा जा सकता हैं। इस भ्रमित स्थिति ने हमारे साहित्य और कलाओं को भी प्रभावित किया हैं। प्रोद्धोगिकी,तकनीक-प्रगति,सूचना-विस्फोट क्रांति,कम्प्यूटर और मोबाईल तथा विज्ञापनीय उप-भोक्ता जगत की नीतियों ने हमारे जीवन की दिशा और दशा दोनों ही बदल कर रख दी। हम अपने जीवन मूल्यों को क्षरित होते देख रहे हैं और विडम्बना यह हैं कि सब जानते हुये भी कुछ करने की स्थिति में नहीं हैं। कारण चाहे जो भी हो किन्तु खुले बाजार की अर्थनीतियों ने उपभोग का एक महाचक्र तैयार कर अकूत धन संपदा आयात करने का एक ऐसा आत्मघाती स्वप्न वर्तमान मनुष्य को दे डाला जिसके लिए वह

उत्साहित हैं। लक्ष्य पाने की उत्कट इच्छा और अभिलाषा ने 'शॉर्टकट' संस्कृति लाकर खड़ी कर दी हैं। इसी वजह से वैश्वीकरण चिंता का विषय बन रहा हैं। श्यामचरण दुबे ऐसी स्थितियों पर अपनी कलम चलाते हुये लिखते हैं- "हमारी संस्कृति अनुकरण की भोगवादी और लिप्सावादी संस्कृति बन गई हैं। आर्थिक उदारता, खुलापन और वैश्वीकरण संसार भर में एक अप-संस्कृति फैला रहा हैं हम इस प्रवृति के असहाय दर्शक मात्र बनकर रह गए।"[1]

इसी वैश्वीकरण के आर्थिक और सांस्कृतिक पक्ष में से आर्थिक पक्ष से उपभोक्तावाद या बाजरवाद जुड़ा हैं जो सभ्यता के स्वरूप को परिवर्तित कर सांस्कृतिक परिवर्तन की एक पृष्ठभूमि भी प्रस्तुत करता हैं जो अदृश्य हैं। होना तो ये चाहिए था कि विश्व के समस्त देश उनकी संस्कृतियाँ एक-दूसरे को प्रभावित कर कुछ श्रेष्ठ तत्वों को ग्रहण करते हुये विकसित होती किन्तु सच्चाई ठीक इसके विपरीत हैं। सांस्कृतिक-पक्ष इस रूप में पूरी तरह अर्थ के साथ जुड़ा हैं। पूंजी और व्यापार का अपने राष्ट्र –राज्य की सीमाओं से बाहर निवेश और प्रसार ,विभिन्न राष्ट्रों के बाज़ारों का एक दूसरे से अंतर-संबंध न केवल व्यापार बल्कि सांस्कृतिक संबंध भी वैश्वीकरण की धुरी बन गए हैं। वैश्वीकरण से निकलनेवाली 'सर्व-जन हिताय' की ध्वनि के विपरीत यह व्यवस्था संसार को कुछ पूंजीवादी प्रतिष्ठानो अर्थात बहुराष्ट्रीय कंपनियों का केंद्रबना रही हैं। इस भूमंडलीकरण का प्रभाव केवल बाजार तथा व्यापार तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि पूरी सभ्यता और संस्कृति को अपनी चपेट में लिए हुये हैं। हमारा रहन- सहन,आचार-विचार,खान-पान आदि जीवन के सभी पक्षो का पूरे विश्व पर प्रभाव पड़ा हैं। बाजारू संस्कृति का जो निर्बाध खेल शुरू हुआ उसके रुकने की कोई संभावना नजर नहीं आती। इसके आर्थिक रूप की बात करें तो भूमंडलीकरण या वैश्वीकरण की प्रक्रिया का प्रारम्भ 19वीं शताब्दी के शुरू में ही हो गया था जब ईस्ट-इंडिया कंपनी ने भारत में अपने पैर रखे थे और धीरे धीरे साम्राज्यवाद को बढ़ावा देते हुये उसने राजनैतिक शक्ति के रूप में स्वयं को भारत का स्वामी बना लिया था और प्रथम विश्व युद्ध के बाद अमेरिकी सूर्य ने अपनी कंपनियों के जरिये व्यवसाय का जाल फैलाने का क्रम शुरू किया जो निरंतर तीव्र-गति से बढ़ता रहा और अनेक अंतर-राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न सांस्कृतिक संस्थाओं की स्थापना ने इस वैश्वीकरण की प्रक्रिया को तीव्र करदिया, साथ ही

इलेक्ट्रोनिक मीडिया के आगमन ने विश्व के राष्ट्रों को जिस चमत्कारिक रूप में एक-दूसरे के निकट ला पटका उससे पूरा विश्व एक ग्राम अर्थात ग्लोबल-विलेज के रूप में दिखाई देने लगा। रेडियो, टी-वी, और कंप्यूटर कृत संचार तंत्र ने इस वैश्वीकरण की प्रक्रिया को गति दी तो मोबाइल ने एक कदम आगे बढ़कर 'दुनिया कर लो मुट्ठी में' तक पहुंचाया। वास्तव में आज पूरे विश्व के लोग जिस तरह से आज एक दूसरे के संपर्क में हैं, इससे पूर्व ऐसा मानव इतिहास में कभी नहीं रहा। टेले-मार्केटिंग, ऑनलाइन शॉपिंग, ट्रेडिंग,पर्चेजिंग,व्यापार और खरीद-फ़रोक्त की नई अवधारणायें पूरे विश्व में ही नहीं भारत में भी ज़ोरों पर हैं। हम एक दूसरे पर पूरी तरह आश्रित हैं। अंतर-राष्ट्रीय स्तर पर यह आवाजाही केवल कुछ द्रव्य तक सीमित नहीं हैं बल्कि पत्रकार, नेता, अभिनेता, आतंक से जुड़े लोग, आदि सभी अपने अपने क्षेत्र में पूरी तरह सक्रिय हैं यह वैश्वीकरण का सांस्कृतिक पक्ष हैं जो विस्थापन को भी बढ़ावा दे रहा हैं।

विदेशी माल के प्रति ललक ने उपभोक्तावाद के साथ साथ ब्रांड की संस्कृति को विकसित करने में भूमिका अदा की जिसकी तहो में पूरा भारत लिपटता जा रहा हैं और इस तरह से एक 'सुपर-बाजार' खडा हो रहा हैं। ये बहुराष्ट्रीय कंपनिया पूरी तरह से व्यवसायिक हैं और इनका एकमात्र उद्देश्य हैं-मुनाफा और लाभ कमाना। उनके सभी कर्मचारियों के 'टार्गेट' हैं चाहे वह छोटा कर्मचारी हैं या फिर बड़ा, सभी इसकी चपेट में हैं नौकरी की सफलता या विफलता अथवा प्रोन्नति का द्वार ये टार्गेट ही होते हैं। इस तीव्र-स्पर्धा के युग में सब जीने की बजाय खुद को मात्र ढो रहे हैं। सिर और हृदय पर भोझ लिए घिसट रहे है अपनी अपनी दिनचर्या की पटरी पर। अलस्सुबह उठते ही जहां दिन की शुरुआत बैड-टी' से होती हैं वहीं से इन कंपनियों की मुनाफाबाजी शुरू हो जाती हैं। पूरी दुनिया सुनियोजित तरीके से इन कंपनियों की दास हो रही हैं। इन से बाहर जीवन की कल्पना करना संभव नही लगता और ये घुसपैठ न केवल शहर बल्कि गाँव और कस्बो में भी हो चुकी हैं। गाँव में घी–दूध की बजाय कोका-कोला का प्रचलन हो चुका हैं और घरेलू डेरियो का स्थान शहर से आई 'मार्का' डेरियों ने ले ली हैं। यानी गाँव रूपी माँ के स्तन खाली हो जाते हैं और वह अपनी संतान को नही दे पाती 'दो बूंद जिंदगी की'।

इस उपभोक्तावादी दृष्टि ने व्यक्ति को मात्र एक 'कमोडिटी'बना डाला हैं जहां मात्र सपने और लालसाएँ हैं। इन लालसाओं को विज्ञापनी दुनिया खूब भुना रही हैं एक मायाजाल बुनकर। आज विज्ञापन का उद्देश्य मात्र वस्तु के प्रति ललक पैदा कर उसे खरीदने को मजबूर करना रह गया हैं क्योंकि उसका लक्ष्य पूरी तरह मुनाफा हैं-'विज्ञापन के जरिये उपभोक्ता के मानस को प्रभावित किया जाता हैं और उत्पाद विशेष के लिए उसमे इच्छा और ललक पैदा कर वास्तविक आवश्यकता न होने पर भी खरीदने के लिए प्रेरित किया जाता हैं'[2]

धन-लिप्सा ही प्रतिस्पर्धा की जन्मदात्री हैं जिसके वशीभूत हमारा युवा वर्ग बेहद संवेदनशील हो रहा हैं। एक किसान पिता अपनी संतान रूपी जमीन बेचकर बेटे की शिक्षा पूरी करता हैं और बेटा शिक्षित होकर धन की चाहत में उसी बुजुर्ग माँ –बाप को छोड़ विदेश या शहर में बस जाता हैं। वे बुजुर्ग अकेले वृददावस्था का दंश झेलने को बजबूर हैं। यही वजह हैं कि पूरे भारत में इस 'डायस्पोरा' के कारण न केवल बुजुर्गो की हत्याओं की वारदाते बढी हैं बल्कि वृददा-आश्रम भी तेजी से खुल रहे हैं। ये वैश्वीकरण का बड़ा ही भयानक-पक्ष हैं जिससे समाज को चिंतित होना चाहिए। इसके प्रभावों को लेकर समस्त विश्व का साहित्य चिंतित हैं जो एक आवश्यकता भी हैं। हिन्दी कथा साहित्य की बात करे तो इसके प्रभाव वहाँ आसानी से देखे जा सकते हैं । वास्तव में कथा साहित्य के दोनों ही पक्ष-कहानी हो या फिर उपन्यास ,वे जीवन के यथार्थ का विस्तार और निकटता में जाकर विश्लेषण की क्षमता रखते हैं। वैश्वीकरण की प्रक्रिया में अपसंस्कृति का जो प्रचार-प्रसार हो रहा हैं वह चाहे आर्थिक असमानता हो या फिर किसानो की आत्महत्या, विस्थापन का तिलिस्म, ब्रांड संस्कृति, स्वप्नों का संसार, सौंदर्य प्रतियोगिताएं ,छीजती मानवीयता, क्षरित होते मूल्य, खुला बाजार, पैसे की दौड़ या फिर आकाशचुंबी इमारतों का स्वप्न-संसार। ये सब कथा साहित्य के कथ्य के तंतुओं की बुनावट का हिस्सा हैं। हृदयेश की कहानी **'शिकार'** की चर्चा करें तो पाएंगे कि कहानीकार जिस मानव और प्रकृति के शाश्वत संबंध की बात करता है उसमे बाजार किस प्रकार सेंध लगा रहा है? निरंतर विकास के नाम पर शहरीकरण मनुष्य के अंतस में टीस पैदा कर रहा है। कहानी का नायक शालिग्राम

कोयल की 'कुहु कुहु कु' को सुनने को बेचैन हैं किन्तु उसे वह ध्वनि न तो शहर और न स्वरूप बदलते गाँव में ही सुनाई देती हैं। नई पीढ़ी उस आवाज़ को इंटरनेट पर खोजती है या फिर फिल्मों के गानों में सुनती है। शालिग्राम इससे संतुष्ट नही है परिणामस्वरूप स्थितियों से जूझते हुए वह विज्ञापनी दुनिया का शिकार हो जाता है। दुख की बात तो यह हैं कि शिकार करानेवाला उसका अपना ही बेटा हैं जो धन के लालच में पिता की भावनाओं का सौदा कर डालता हैं। आज की पीढ़ी हर उस चीज का फायदा उठती हैं जो बिकती हैं। इसे बड़े ही गर्व से वह अपनी व्यावसायिक दक्षता कहती नहीं अघाती। बाज़ार का अर्थशास्त्र बहुत सक्षम है, फलतः विज्ञापनों के माध्यम से वह व्यक्तियों की सोच को इस कदर बदल रहा है कि हम इसकी कल्पना भी नही कर सकते। जीवन का प्रत्येक क्षेत्र अब बाजार द्वारा संचारित हो रहा हैं। विज्ञापन एजेंसी और फैशन की दुनिया पर व्यंग्य कसती असगर वजाहत की कहानी **'सूफी का जूता'** हैं जिसमें दिखाया है कि जिस सूफी संगीत को रूहानी, आत्मतोष संगीत कहा जाता हैं उसे मुनाफाखोर किस तरह मुनाफे का सौदा बना रहे हैं। कैसे कोरपोरेशन जनहित के नाम पर सूफी मुखड़ों को 'वेस्टर्न म्यूजिक' का 'टच' देकर अपनी जेबें भर रही हैं, यहाँ संगीत के नाम पर केवल शोर शराबा हैं। बाज़ार सुंदरता को सेक्स अपील से जोड़ता है, धर्म और अध्यात्म का व्यावसायिकरण करता है।ऐसे ही अल्का सरावगी के उपन्यास **'शेष कादम्बरी'** की रूबी को अपने आस-पास जब नई चमचमाती और महंगी गाडियाँ दिखती हैं तो उन्हें कोफ्त होती हैं और अपनी पुरानी कार को खतरा मानने लगती हैं। वह सोचती हैं कि लोगों के पास इतना अकूत धन कहाँ से आ गया हैं? ऐसे में स्वयं को मिसफिट मानते हुये कहती हैं; वह अपने को जमाने के साथ पाती थी पर अब नई नई तरह की चमचमाती गाड़ियों के बीच अपने को बहुत अकेला और पिछड़ा हुआ पाती हैं।"[3] ये सब उस उदारवाद या उधार की बदौलत हैं जो ये फाइनेंस कंपनिया युवाओं के साथ खेल उन्हें बरग्ला रही हैं। उनका मानसिक शोषण कर रही हैं किन्तु सपनों के पीछे भागते युवा अंजान हैं इस शोषण से। गीताश्री की कहानी **'सपने भी डाउन्लोड होते हैं'** की सुमित्रा उन युवाओं का प्रतीक हैं जो स्वम को फैशनेबल दिखाने के लिए क्या –क्या नहीं करते? अपनी आर्थिक स्थितियों को नजर-अंदाज कर मात्र दिखावे के लिए उस रास्ते पर निकाल पड़ते हैं जहां चमक-दमक तो हैं किन्तु इज्जत नहीं हैं। वो जमाने

लद गये जब लोग इज्जत के लिए कुछ भी करने को तैयार रहते थे,आज तो सपने पूरे होने चाहिए फिर उनकी कीमत चाहे जिस रूप में भी अदा करनी पड़े। सुमित्रा जैसी कामवालियों को कोई घर काम देना नहीं चाहता क्योंकि –'तेरे लक्षण देख तो रही हूँ ,जब से आई हैं कान में मोबाइल का वायर लगा ही हुआ हैं ,पता नही मेरी बात सुन रही हैं या गाने'[4]

रजनी गुप्त के उपन्यास 'एक न एक दिन' में नई पीढ़ी की कॉरपोरेट जगत की दुनिया का चित्रण है। इस दुनिया में एम बी ए और एम सी ए की डिग्री धारक युवक और युवतियों को लाखों के पेकेज मिलते तो हैं किन्तु उनकी जीवनशैली में कहीं भी चैन और संतोष नही है। ब्रांड के पीछे भागते इन युवाओं पर माता-पिता रोक-टोक तो नही लगाते किन्तु उनके खर्चों को सीमित करने की नसीहत ज़रूर देते हैं। ब्रांड पर खर्च किए पैसे के विषय में 'पापा' का तर्क है- "निजी कंपनी वाले तुम जैसों को ब्रांडेड का लेबल चिपकाकर लूटते हैं सरेआम।[5] युवा भी निजी कंपनियो के जाल में फंसे स्वयं का दर्द कुछ यूं बयान करते हैं- "कोई नही समझना चाहता हमारे तनावों को! उफ़्फ़ कितनी भगदड़ मची रहती है हमारे अंदर और बाहर"।[6] यह सत्य है कि युवा मशीन बन चुके हैं किन्तु इनके जिम्मेदार भी वे स्वयं हैं। उनकी महत्त्वकांक्षाएँ दिनों-दिन बढ़ती रहती हैं। मधु कांकरिया की **'बुद्ध ने काटा'** कहानी में एक नौजवान मल्टीनैशनल कंपनी में ब्रांड मैनेजर है और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कंपनी का प्रतिनिधित्व करता है। ब्रांड के पीछे दीवानगी पागलों की हद तक है । उसकी ज़िंदगी का मकसद 'एक्सेस' है अर्थात ज़्यादा पैसा, ज़्यादा खर्च, ज़्यादा रफ्तार, ज़्यादा घूमना, ज़्यादा तनाव, ज़्यादा प्रेशर और इस तरह ज़िंदगी को जीने की बजाए दौड़ा रहा है। रफ्तार की जीवनशैली और तनाव ने उसे भेंट स्वरूप नपुंसकता प्रदान की है। कंपनी के लॉस, प्रॉफ़िट के चक्कर में उसे केवल लॉस मिलता है प्रॉफ़िट तो कंपनी उड़ा ले जाती है ।वह अपनी माँ से कहता हैं— "हमें नोकरी में रहना हैं तो हर हाल में कंपनी को प्रॉफ़िट कमा कर देना होगा, चाहे कपट से अनैतिकता से या फिर अधर्म से"[7] युवाओं को मशीन के रूप में तैयार करके अपना हित साधन ही इन कंपनियों का लक्ष्य है। आज भारत में 'अभी खरीदो, बाद मे सोचो' संस्कृति का ज़ोर है। मध्यमवर्गीय व्यक्ति के पास खरीदने की क्षमता नही है लेकिन खरीदने की लालसा तीव्र है, परिणामस्वरूप मानसिक तनाव प्रबल हो उठता है।

इसी संदर्भ में जयनन्दन की कहानी **'लोकतन्त्र की पैकिंग'** की चर्चा की जा सकती है । 'मुदित' एक रिटायर्ड संवेदनशील बुजुर्ग हैं जो अपनी आय का कुछ हिस्सा गरीबों की मदद के लिए देना चाहता है किन्तु परिवार के अन्य सदस्य इस फ़ेवर में नही हैं । आधुनिक जीवन शैली के सभी उपकारण होने के बावजूद परिवार और अधिक की कामना रखता है। वह बड़ा घर, और बड़ी गाड़ी, ब्रैंडिड कपड़े और जूतों की लालसा से उबर नही पाता। मुदित को वे सब (परिवार के लोग) मानवतावाद के पर्यायवाची शब्दो का अर्थ खो चुके ग्लोबल दुनियाँ के वाशिंदे लगते है जिनमे संस्कारों को ढूँढने की कोशिशे बेकार हैं, परिणामस्वरूप वह परिवार और शहर से दुखी हो गाँव की ओर पलायन कर जाता है। काशीनाथ सिंह के उपन्यास **'काशी का अस्सी'** राजनैतिक समस्याओं से प्रेरित होते हुये भी 21वीं सदी में पैर पसारते बाजारवाद के प्रति अपनी चिंता साफ दर्शाता हैं- "हम तो बाजार का एक ही मतलब जानते है सरकार, बाजार वह नहीं हैं जो सड़क पर हैं, दुकान में हैं, नुक्कड़ पर हैं, शोकेस में हैं। बाजार वह हैं जो तुम्हारे दरवाजे पर हैं,पोर्टिको में हैं,ड्राइंग रूम में हैं,बेडरूममें हैं,अलमारी में हैं, किचन में हैं, टॉइलेट में हैं और यही क्यो तुम्हारे बदन पर हैं। सिर के बालो से लेकर पैरो के नाखून तक हैं"[8] 'रेहन पर रग्गू' उपन्यास में भी गांवों में पैर पसारते शहर का प्रवेश दिखया हैं । नई नई कालोनियाँ बस रही हैं, उपभोकतावाद तथा बाजरवाद निरंतर विकास पा रहा हैं । यह वास्तव में बाजार की शक्तियों द्वारा हमारे गांवों को विश्व-ग्राम का अंग बनाने का भूमंडलीय उपकरण हैं-"गाँव में वह सब पहुँच रहा था, धीरे-धीरे जो शहर में था– बिजली भी, नल भी, फोन भी, टी वी भी, अखबार भी लेकिन वह मजा नही था जो शहर में था"[9] वास्तव में यहाँ मास्टर रग्घू की पीड़ा हैं जो दो-दो बेटों का बाप होकर भी अकेला हैं। एक विदेश बस गया तो एक शहर। मास्टर जी समय के फेर की व्याख्या करते कहते हैं कि –'शरीफ इंसान का मतलब हैं निरर्थक आदमी, भले आदमी का मतलब हैं कायर आदमी ,जब कोई आपको विद्वान कहे तो उसका मतलब मूर्ख समझिए"[10] इस बाजार ने न केवल जीवन-शैली बल्कि मूल्यों को भी विस्थापित किया हैं। गाँव से शहर की ओर भागते युवाओं का बहिर्गमन चिंता का विषय हैं। इसी संदर्भ में महेश प्रजापति की कहानी **'पिरितिया काहे को लगवल'** पति-पत्नी के सम्बन्धों में दुराव की कथा है।

पति शहर का हिस्सा है और शहरी चमक में फँसा गाँव वापस आना नही चाहता और संसाधनों के अभाव में पत्नी और बच्चे को शहर बुला नही पाता। पत्नी हर त्योहार पर पति का इंतजार करती हैं जो महीने और फिर सालों में बदल जाताहैं। बाजार में उपलब्ध हर वस्तु को खरीद सकने की क्षमता को प्राप्त करते करते हम उस पड़ाव तक पहुंच जाते हैं जहां न वस्तु की आवश्यकता रह जाती हैं और न बाजार की। उदय प्रकाश की **'तिरिछ'** कहानी जो शहर के उस भयानक रूप को प्रस्तुत करती है जो जानवर से भी क्रूर है। नगर जीवन की यांत्रिकता, स्वार्थपरता और मूल्यहीनता ने ग्रामीण जीवन को कैसे छीज दिया हैं। पूंजी की वर्चस्वता मानवीय मूल्यों के लिए संकट बन कर आती हैं। 'पिताजी' शहर के उस संवेदनहीन आबोहवा से परिचित है इसलिए वहाँ जाना नही चाहते किन्तु मजबूरीवश जाना पड़ता है। शहर द्वारा उगला संवेदनहीनता का जहर पिताजी की नसों में उढेल दिया जाता है।पिताजी एक स्थान पर कहते हैं –'मैं विश्वास करना चाहता हू कि यह सब सपना हैं और अभी आँख खोलते ही सब ठीक हो जाएगा'।[11] किन्तु सपना कहाँ? यह तो वो हकीकत थी जो खीच ले जाती हैं उस द्वार तक जिसकी अभी आवश्यकता ही नहीं थी। कहानी का अंत स्पष्ट करता है कि जहर से बचने की संभावनाएं हो सकती है किन्तु शहर से नही। रणेन्द्र का उपन्यास **'ग्लोबल गाँव के देवता'** हों या फिर संजीव का **'फांस'** उपन्यास - ये दिखाते हैं कि कैसे ये कंपनियाँ या सरकार के नुमाइंदे भोली-भाली जन जातियों अथवा किसानो को कैसे अपना शिकार बनाती हैं।

निष्कर्ष: इस प्रकार हिन्दी कथा साहित्य जीवन के प्राय प्रत्येक क्षेत्र में हो रही मूल्य-क्षरण की स्थितियों पर चिंताकुल हैं। यह चिंता जायज भी है। एक साहित्यकार समाज को आईना दिखानेवाला होता हैं। कहा जाता हैं कि अगर राजनीति को समझना हैं तो इतिहास पढिए लेकिन अगर समाज को जानना हैं तो तत्कालीन साहित्य को पढ़ना जरूरी हैं। साहित्य समाज का आईना हैं। इसमे समाज की अगर सुरुचिपुर तस्वीर दिखती हैं तो बदसूरती भी साहित्य ही दिखाता है। वैश्वीकरण और बाजार ने हमसे कितना कुछ लिया उसकी तस्वीर हमें समकालीन कथा साहित्य में स्पष्ट और पूर्णता से दिखाई देती हैं।

यह बाजार आगे भी कितना कुछ छीनेगा और कितना देगा यह हम सबके लिए विचारणीय और चिंतन का विषय होना चाहिए!

संदर्भ ग्रंथ

1 श्यामचरण दुबे- समय और संस्कृति- पृष्ठ-131
2 गिरीश मिश्र – भूमंडलीकरण की दुनिया में विज्ञापन ,जनसत्ता दैनिक पत्र–पृष्ठ 10
3 अल्का सरावगी –शेष कादम्बरी-उपन्यास,पृष्ठ- 44
4 गीताश्री – सपने भो डाउन्लोड होते हैं- कहानी, हंस पत्रिका, अंक मार्च 2016,पृष्ठ- 58
5 रजनी गुप्त –एक न एक दिन-उपन्यास, पृष्ठ-34
6 वही
7 मधु कंकरिया – बुद्द ने काटा–कहानी, नया ज्ञानोदय,रवीन्द्र कालिया 126, पृष्ठ-26
8 काशीनाथ सिंह-काशी का अस्सी-उपन्यास, पृष्ठ-142
9 काशीनाथ सिंह- रेहन पर रग्गू –उपन्यास, पृष्ठ-104
10 वही, पृष्ठ-86
11 उदय प्रकाश-तिरिछ –कहानी, पृष्ठ-47

डॉ अनीता यादव
एसोसिएट प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग), गार्गी कॉलेज दिल्ली, दिल्ली विश्वविद्यालय
(सृजनात्मक लेखन के तौर पर व्यंगकार)
ई-मेल dr.anitayadav77@gmail.com

भारत का अमृत महोत्सव और नई प्रौद्योगिकी व हिंदी

डॉ. अमित कुमार दीक्षित

भारत का अमृत महोत्सव का उद्देश्य India@2047 के लिए विज़न बनाना है जिसका आधार तकनीकी और वैज्ञानिक उपलब्धियों के साथ विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक सामंजस्य को भी स्थापित करना है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि देश को आजाद हुए 75 वर्ष हो गए अर्थात इस वर्ष भारत की आजादी का अमृत महोत्सव मनाया जा रहा है लेकिन अब भी इसकी कोई राष्ट्रभाषा नहीं है। हमने एक राष्ट्र-चिहन्, एक राष्ट्र – ध्वज, एक राष्ट्र गान और एक राष्ट्रीय प्रतीक को तो अपनाया, लेकिन हम हिंदी को राष्ट्रभाषा गौरव प्रदान नहीं कर सके। राष्ट्रभाषा वस्तुतः राष्ट्रीय जीवन का आदर्श होती है।

हिंदी – राष्ट्रभाषा एवं संयुक्त एवं संयुक्त राष्ट्रसंघ की अधिकृत भाषा बनने के योग्य है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के लिए हिंदी में विज्ञान – चिंतन आवश्यक है। हिंदी के विज्ञान – लेखन में सबसे बड़ी बाधा भाषिक स्वाभिमान की कमी है।

किसी भी स्वतंत्र राष्ट्र के लिए तीन वस्तुएं विशेष सम्मानीय व विशिष्ट होती हैं –

- राष्ट्र-ध्वज, जिसमें देश का मान छिपा होता है।
- राष्ट्र संविधान, जो देश की शान का प्रतीक होता है।
- राष्ट्रभाषा, जो राष्ट्र की आन और वाणी का अभिमान होती है।

वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में डिजीटल मीडिया द्वारा हिंदी को अफ्रीका, मध्य-पूर्व, यूरोप और उत्तरी अमेरिका में एक चित्ताकर्षक ढ़ंग से लगातार पुहंचाया जा रहा है। धरती से 35000 फीट से भी अधिक ऊँचाई पर हिंदी की कमी का अनुभव होने लगा है। आस्ट्रियन एयरलाइन्स, स्विस एयरलाइन्स, एयर फ्रांस ने कहा है कि भारतीय यात्रियों की लगातार हो रही वृद्दि को दृष्टिगत रखते हुए, वे भारत की अपनी प्रत्येक उड़ान में कम से कम ऐसे दो क्रू को रखेंगे जो हिंदी बोलना जानते हों। भूमंडल पर हिंदी दौड़ रही है, तथा वायुमंडल में उड़ रही है, तथा राष्ट्रीय अस्मिता और आस्तित्व को पारदर्शी तौर पर विश्व के समक्ष सफलतापूर्वक रख रही हैं। आज हिंदी सूचना प्रौद्योगिकी की भाषा बन गई है। समाचार, पत्र-पत्रिकाएं आकाशवाणी, दूरदर्शन, फिल्म कंप्यूटर, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने हिंदी का बहुत ही प्रचार – प्रसार किया है। वैश्विक ग्राम में अपना आस्तित्व बनाये रखने हेतु प्रतिस्पर्धा भी बढ़ी। इस संबंध में प्रसाद जी की पंक्तियां उपर्युक्त प्रतीत होती है।

"यह नीड़ मनोहर कृतियों का
यह विश्व एक रंगस्थल है
है परम्परा लग रही यहां
ठहरा जिसमें जितना बल है।"

सन् 1965 में देवनागरी संबंधित एक आवश्यक साफ्टवेयर निर्मित किया गया । इसके बाद अनेक पैकेज आए। समर्पित साफ्टवेयर प्रोग्राम के अन्तर्गत हित में अत्युपयोगी, हिंदी में डाटा संसाधन का एक साफ्टवेयर आया जो द्विभाषी डाटाबेस प्रबंधन प्रणाली के नाम से जाना जाता है । डीम्बेस, लोटस साफ्टबेस क्लिपर फॉक्सप्रो तथा ओरेकल आदि रोमन लिपि के सभी साफ्टवेयर पैकेज में हिंदी कार्य किया जा सकता है । लिप्स प्रौद्योगिकी सी-डैक जिष्ठ ग्रुप पुणे के दूसरे चरण में हिंदी में विडियों प्रदर्शनार्थ एक साफ्टवेयर विकसित किया गया है । यूनिकोड तकनीक ने तो इस काम को और आसान किया है । टाइप करो रोमन अंग्रेजी में और प्राप्त करो देवनागरी हिंदी में, सचमुच नई प्रौद्योगिकी के नित नये आविष्कारों ने लोगों को आत्मनिर्भर बनाया है । आज इंटरनेट के साथ अन्य अनेक तकनीकी सूचना संजाल सोशल नेटवर्किंग साइट्स के रूप में बेजोड़ है । इन अत्याधुनिक साइट्स में हिंदी में अभिव्यक्ति की सारी सुविधा उपलब्ध है - ऑरकूट, फेसबुक, ट्वीटर, माई स्पेस, वाट्सअप, इंस्टाग्राम, ब्लॉग स्पॉट इत्यादि।

'बिलगेट्स' ने स्वीकारा है - "नागरी की संगणकीय आवश्यकता हिंदी के विकास में परिणत होगी यह लगभग तय है।"

नई प्रौद्योगिकी व हिंदी नवीनतम ई-टूल्स

- हिंदी टाइपिंग विकल्प
- मशीन अनुवाद
- कंठस्थ (ट्रांसलेशन मेमोरी सिस्टम)
- हिंदी ई - लर्निंग
- अनुवाद ई - लर्निंग
- ऑनलाइन ई – महाशब्दकोश

- हिंदी स्कैनर
- विंडोज 10 में नया फोनेटिक की - बोर्ड
- ई - सरल हिंदी वाक्यकोश
- ई - पत्रिका पुस्तकालय
- ईकाई परिवर्तक
- गूगल सीट में एक साथ कई भाषाओं में अनुवाद
- कंप्यूटर पर ऑफलाइन वॉइस टाइपिंग – बिना क्रोम ब्राउसर के
- संख्या से शब्दों में परिवर्तक
- हिंदी में बोलकर टाइप करें
- कृतिदेव से यूनिकोड में परिवर्तक
- एंड्रोएड फोन पर हिंदी में वॉइस टाइपिंग
- हिंदी में ई-मेल आईडी *(डाटामेल के द्वारा हिंदी में भी ई-मेल तैयारी की जा रही है जैसे – अमितकुमारदीक्षित@डाटामेल.भारत)*

भारतीय भाषाओं में बातचीत का मुख्य प्लेटफॉर्म है कू

भारत का माइक्रोब्लॉगिंग और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म Koo (कू) भारतीय भाषाओं में बातचीत का प्रमुख मंच बन गया है। Koo (कू) के 1 करोड़ यूजर में से करीब 50 % (50 लाख) यूजर हिंदी में बातचीत करते हैं। Koo पर हिदीं पोस्ट की संख्या औसतन किसी भी माइक्रोब्लॉगिंग साइट पर हिंदी पोस्ट की संख्या से लगभग दोगुनी है। इसके अलावा पिछले चार महीनों में Koo पर हिंदी उपयोगकर्ता की संख्या में 80 % वृद्धि हुई है। अनुमान है कि अगले 5-6 वर्षों में भारतीय इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या अरबों तक पहुंच सकती है।

'राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी' के अनुसार – "हिंदी का प्रश्न मेरे लिए देश की आजादी का प्रश्न है। हिंदी भाषा केवल एक राजभाषा नहीं है, वह संपूर्ण देश की संस्कृति के रूप में पल्लवित और पुष्पित भाषा है।"

हिंदी में ई - प्रौद्योगिकी के अमूल्य योगदान ने इनकी सार्थकता बढ़ा दी है । विज्ञान से जुड़ता हिंदी ज्ञान, पाठकों का अनवरत् अनुष्ठान ने हिंदी को अन्तर्राष्ट्रीय गौरव प्रदान किया है । विश्व के कई प्रमुख देशों में अब स्कूलों में भी हिंदी पढ़ाई जाने लगी है । इसकी सूची है – येल, पैन, लोयोला, शिकागो, वाशिंगटन, ड्यूक, आयोवा, ओरेगांन, कोरनेल इत्यादि । राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर क्रय - विक्रय में विज्ञापन की प्रधान भूमिका होती है । विज्ञापन को देखकर उत्पादन को खरीदने के लिए उपभोक्ता उत्सुक हो जाता है । रेडियों दूरदर्शन टेलिविजन पर प्रसारित कार्यक्रम जन-जन तक पहुंचते है । तुर्की, अरब, मारिशस, मिश्र, लिबिया आदि देशों में हिंदी फिल्मों के प्रति लगाव उल्लेखनीय है । हम गर्व के साथ कह सकते है कि इस वर्ष सिर्फ भारत का अमृत महोत्सव नहीं बल्कि हिंदी का भी अमृत महोत्सव मनाया जा रहा है इन 75 वर्षों में हिंदी ने तकनीकी और डिजीटल के क्षेत्र में जो स्थान प्राप्त किया है सचमुच वह सराहनीय है । हिंदी भाषा में विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित विषयों की प्रसांगिकता आज अनिवार्य हो गयी है ।

" घर में मातृभाषा, दफ़्तर में राजभाषा
हिन्द शब्द से बनी हिन्दी ही है हमारी राष्ट्रभाषा"

डॉ. अमित कुमार दीक्षित
स्टील अथॉरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड (सेल)
सीएमओ, कोलकाता, पश्चिम बंगाल
मोबाइल नंबर - 9003238025

नवीन प्रकाशित पुस्तक

कोरोना काल में भले ही जिंदगी थम सी गई थी और हम सब अपने-अपने घरों में सिमट कर रह गए थे और एक अदृश्य भयावहता के आतंक से त्रस्त-ग्रस्त और आतंकित थे, हम अज्ञान थे इस बात से कि मौत हमें अपने भयानक पंजों में दबोचने के लिए कहाँ बैठी हैं? लेकिन कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्होंने अपनी और अपनों की चिन्ता किए बिना इस भयावह और सर्वव्यापी महामारी के दौर में भी अपने कार्य को जारी रखा हुआ था। वह किसी देवदूत अथवा सुपर हीरो से कम नहीं थे और वह थे हमारे कोरोना योद्धा ! यह पुस्तक उन्हीं कोरोना योद्धाओं को कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए समर्पित है।

घरों में सिमटी हुई जिंदगी जैसे थम सी गई थी लेकिन हमारे मस्तिष्क में कहीं न कहीं अनेक प्रश्नों का झंझावात चल रहा था। आखिर यह भयावह स्थिति किस प्रकार बनी? किस कारण बनी? क्यों हम अपने घरों में सिमट कर रह गए? क्या प्रकृति हमसे रूठ गयी? घरों में सिमटी हुई जिंदगी के बावजूद भी मन और मस्तिष्क में विचारों के अंधड़ चलते ही रहे और इन्हीं विचारों की उहापोह से कोरोना काल की कविताओं का सृजन हुआ और उन कविताओं के सृजन से यह नवनीत रूपी कोविड: काव्य संकलन "सिमटी जिंदगी" शैशव से प्रौढ़ता को प्राप्त हुआ। विविधता से परिपूर्ण यह काव्य संकलन कालजयी रचनाओं में सम्मिलित होगा। ऐसी हम आशा करते हैं।

अब यह पुस्तक प्रकाशक की वेबसाइट, अमेज़ोन एवं फिलिप्कार्ट पर बिक्री के लिए लाइव हो गयी है। आप अपनी प्रति दी गयी लिंक Notion Press: https://notionpress.com/read/simatee-zindagee अमेज़ोन : https://www.amazon.in/dp/1638326304 एवं फिलिप्कार्ट से https://www.flipkart.com/simatee.../p/tme83114c7f74db... उक्त लिंक द्वारा खरीद सकते हैं।

ई - प्रदीप
ऑनलाइन पत्रिका